यात्रा-कथा
माता वैष्णो देवी

IN THE LIGHT OF ACT, 1986

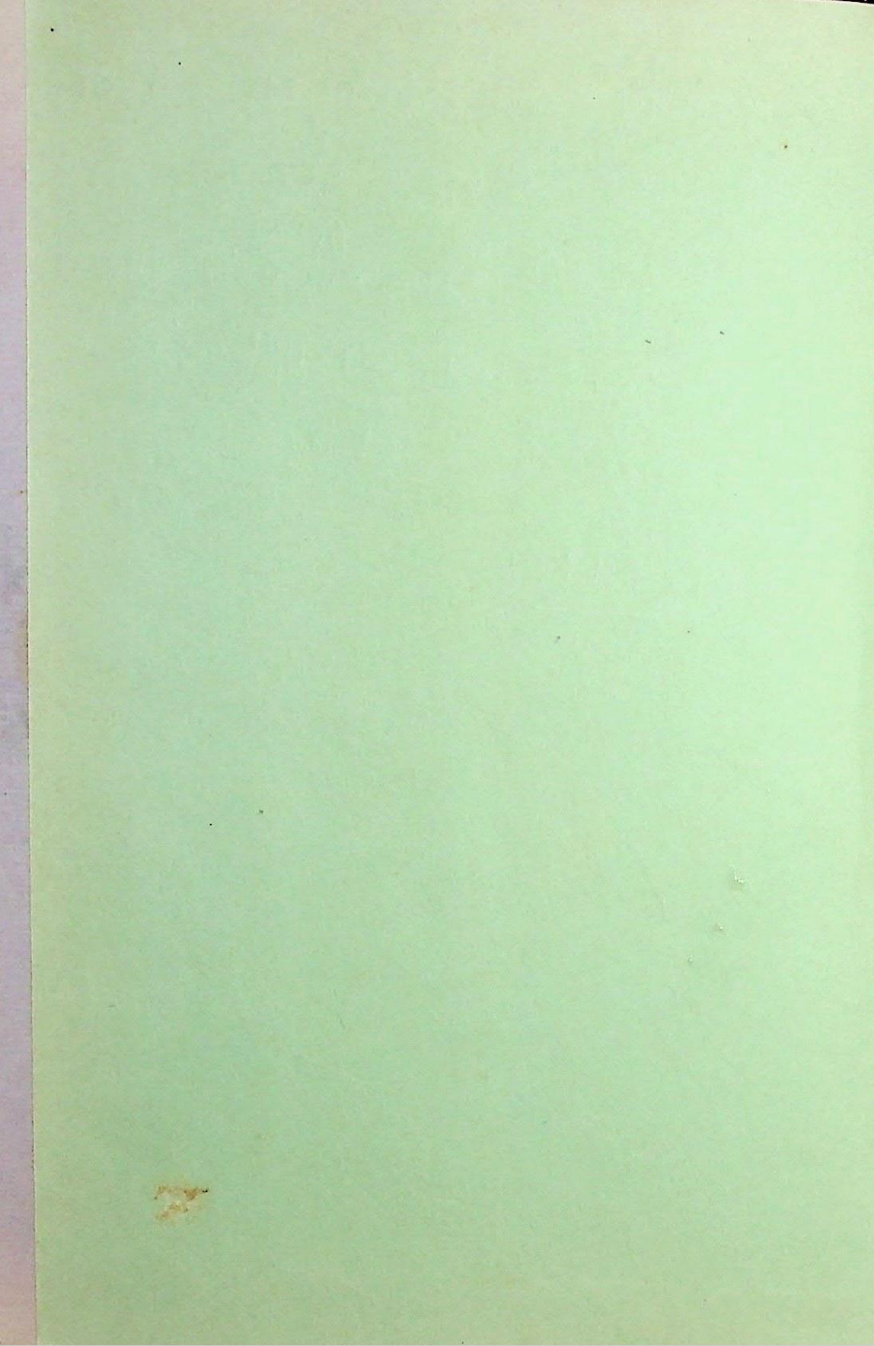
डा डी·के·शास्त्री

राजेश प्रकाशन, जम्मू (कश्मीर)

आदरणीय श्री एन. आर. गुप्ता
जी को सादर भेंट.

प्रो० बी० के० शास्त्री
121, रघुनाथपुरा
जम्मू

रामनवमी
-14.4.1989



यात्रा-कथा

माता वैष्णोदेवी

यात्रा-कथा

माता वैष्णोदेवी

डा० बी० के० शास्त्री
एम० ए०, पी० एच० डी०

राजेश प्रकाशन जम्मू (कश्मीर)

प्रकाशक :

राजेश प्रकाशन

121, रघुनाथपुरा, जम्मू (कश्मोर)

मूल्य : 30.00 रुपये
पेपरबैक : 12.00 रुपये

संस्करण : 1988

मुद्रक :
शर्मा प्रिंटर्स,
137 शाम गली नं० 1 मौजपुर, दिल्ली-110053

YTARA-KATHA—Mata Vaishno Devi Rs.30.00
By Dr. B.K. Shastri Paper Back : 12.00

विषय-सूची

दो शब्द

30, अगस्त ईस्वी सन् 1986 शनिवार के दिन जम्मू-कश्मीर सरकार की ओर से एक असाधारण राजकीय परिपत्र जारी किया गया, जिसके अनुसार भारत गणराज्य के सैंतोसवें वर्ष में प्रदेश के राज्यपाल ने जम्मू-कश्मीर के संविधान की धारा (92) के अन्तर्गत एक अध्यादेश की घोषणा की। इस अध्यादेश का नाम था, "जम्मू-कश्मीर श्री मातावैष्णो देवी तीर्थं अधिनियम 1986।"

इस अधिनियम के अन्तर्गत कटड़ा से लेकर माता वैष्णोदेवी जी की पवित्र गुफा तक के पूरे क्षत्र के भवन, वन-भूमि, पर्वत और पूजा स्थान, जिनका प्रबन्ध पूर्वकाल में धर्मार्थ ट्रस्ट के अधीन था, उन्हें एक स्वायत्तशासी बोर्ड के अधीन कर दिया गया। उस समय से यह बोर्ड ही माता वैष्णोदेवी तीर्थ एवं उससे सम्बन्धित अन्य स्थानों की प्रबन्ध और प्रशासन की व्यवस्था कर रहा है।

प्रस्तुत पुस्तक की रचना इस अध्यादेश के परिप्रेक्ष्य में ही की गई है। आशा है इससे तीर्थ यात्रियों एवं अन्य लोगों को अधिग्तहण के पूर्व एवं पश्चात् की सारी प्रबन्ध-व्यवस्था के परिचय के साथ-साथ माता वैष्णोदेवी जी से सम्बन्धित अन्य ऐतिहासिक एवं शास्त्रसम्मत प्रसंगों की जानकारी भी मिलेगी।

विनीत :

डा० बी० के० शास्त्री

भारत में तीर्थयात्रा की परम्परा

हमारे देश में प्राचीन काल से ही तीर्थ यात्रा की परम्परा रही है। आर्यजाति के आदिग्रन्थ ऋग्वेद से लेकर इतिहास और पुराण ग्रन्थों में तीर्थों का व्यापक वर्णन मिलता है। "हमारे महान् पूर्वजों ने भारतवर्ष के अनेक क्षेत्रों में तीर्थों की जो विशाल श्रृंखला स्थापित की, उसने न केवल देश के विभिन्न भागों में रहने वाले अलग-अलग भाषा-भाषी लोगों को एकसूत्र में पिरोए रखा, बल्कि भारतीय जीवन में नीति और अध्यात्म की ज्योति भी जागृत रखी।"[1]

भारत में एकता और अखण्डता की भावना को सुदृढ़ करने में तीर्थयात्रा की इस प्राचीन परम्परा ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। एक दूसरे से हजारों मील की दूरी पर रहते हुए भी, खान-पान, वेश-भूषा और भाषा की दृष्टि से विभिन्नता रखते हुए भी भारत के सभी हिन्दू एक समान भावना से देश के तीर्थों की यात्रा करते हैं। इन यात्राओं से सम्पूर्ण भारत के हिन्दू भावात्मक एकता में बंधे हुए हैं।

भारतीय दर्शन में धर्म और नीति की प्रधानता रही है। जिस सदाचार का पालन करने से मानव को इस लोक में उन्नति और परलोक में परम कल्याण रूप शाश्वत सुख की प्राप्ति होती है, वही धर्म है।[2] नीति का अर्थ है—व्यवहार। जिस मार्ग पर चलने से सभी प्राणियों का कल्याण हो उसे नीति कहा जाता है। मानव के आध्यात्मिक और नैतिक क्षेत्र

---

1. डॉ० कर्णसिंह : भूमिका, माता वैष्णो—इतिहास और कथा।
2. वैशेषिक दर्शन : 1/1/2

में उन्नति और विकास के इतिहास को संस्कृति कहा जाता है जिसका उद्देश्य हमारे जीवन को परिष्कृत, शुद्ध एवं पवित्र बनाना है। मानव के द्वारा अपने मन और आत्मा को संतुष्ट करने के प्रयत्न का नाम ही संस्कृति है जिसका अर्थ निश्चय ही धार्मिक विश्वास है। इसी धार्मिक विश्वास के कारण अपने मन और आत्मा को संतुष्ट करने के लिए भी हमारे देश में तीर्थयात्रा की परम्परा रही है।

भारत तीर्थ प्रधान देश है। इसके कोने-कोने में विभिन्न देवी देवताओं के तीर्थ विद्यमान हैं। शास्त्र के अनुसार इन तीर्थों का माहात्म्य सुनने से ही पुण्य होता है और उसके बाद यदि कोई उनकी यात्रा के लिए जाए तो सौ गुणा पुण्य होता है! मन को अशान्ति मिटकर, अभिलाषा पूरी होती है।[1] मानव जीवन के चार प्रयोजनों में से धर्म, काम और मोक्ष—इन तीनों की प्राप्ति तीर्थयात्रा से बताई गई है। इस प्रभाव से कुछ लोग धर्म संग्रह के लिए, कुछ लोग अपनी कामना पूरी करने के लिए और कुछ लोग मुक्ति प्राप्त करने की इच्छा से तीर्थ यात्रा करते हैं।

परन्तु आमतौर पर मानव आत्मा की शान्ति के लिए तीर्थ यात्रा करता है। संसार और गृहस्थी की चक्की में दिन-रात पिसता हुआ जब वह परेशान होने लगता है, संसार के सुखों को पाकर भी जब उसकी आत्मा अतृप्त रहती है तो वह आत्मिक शान्ति के लिए तीर्थयात्रा पर जाना चाहता है। संसारिक व्यक्ति के लिए चाहे यह आत्मिक सुख और शान्ति थोड़ी देर के लिए होती है, पर इससे उसकी आत्मा को जो तृप्ति लाभ होता है, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। इसी कारण से हिन्दू धर्म और हिन्दू संस्कृति में तीर्थयात्रा को

---

1. महाभारत: वनपर्व

महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। तीर्थों की यात्रा के लाभ बताकर उनकी यात्रा की प्रेरणा दी गई है।

अथर्ववेद में लिखा है कि जिस प्रकार यज्ञ करने वाले यजमान यज्ञ के द्वारा संसार की आपदाओं से मुक्त होकर पुण्यलोक की प्राप्ति करते हैं, उसी प्रकार तीर्थयात्रा करने वाले, तीर्थों के प्रभाव से पापों और कष्टों से मुक्त होकर पुण्यलोक में जाते हैं।[1] महाभारत में तीर्थयात्रा को यज्ञ से भी अधिक महत्व देते हुए कहा गया है कि यद्यपि यज्ञ का इस लोक और परलोक में लाभकारी फल मिलता है, परन्तु गरीब लोग उन यज्ञों को नहीं कर सकते, क्योंकि उनमें बहुत-सी सामग्री की आवश्यकता होती है।[2] जिनके पास धन की कमी और सहायकों का अभाव है वे यज्ञ करने में समर्थ नहीं होते। जो सत्कर्म गरीब लोग भी कर सकें और जो यज्ञ के समान फल दे सके, ऐसा कर्म तीर्थयात्रा है। तीर्थयात्रा यज्ञों से भी बढ़कर है। मनुष्य तीर्थयात्रा से जिस फल को पाता है, उस फल को बड़े-से-बड़ा यज्ञ करके भी नहीं पा सकता।[3]

किन्तु प्रत्येक व्यक्ति को तीर्थयात्रा का आशा के अनुकूल तब तक फल नहीं मिल सकता जब तक उसके आचार-विचार शुद्ध न हों। जिसका मन अपने वश में हो, जो दान न लेता हो, जो कुछ अपने पास हो उसी से संतुष्ट रहने वाला, अहंकार न करने वाला, अक्रोधी, अल्पाहारी, सत्यवादी और सब

---

1. अथर्ववेद काण्ड 18, अध्याय 4, सू. 4,
2. न ते शक्या दरिद्रेण यज्ञाः प्राप्तुं महीपते।
   बहूपकरणा यज्ञा नानासम्भार विस्तराः ॥
   —महाभारत, वनपर्व, 82/14
3. महाभारत, वनपर्व 82/17

प्राणियों के प्रति समभाव रखने वाला ही तीर्थयात्रा के द्वारा उत्तम फल प्राप्त करने का अधिकारी होता है। और ऐसा यात्री जिसके मन में तीर्थ स्थान और तीर्थ के देवी-देवताओं के प्रति श्रद्धा नहीं है, जो तीर्थ पर आकर भी पाप कर्म करने से संकोच नहीं करता, जिसे देवी-देवताओं पर विश्वास नहीं, जो तीर्थ और तीर्थ के देवता के विषय में बात-बात पर सन्देह और विवाद करता है। इस प्रकार के आचरण करने वाले पाँच प्रकार के व्यक्तियों को किसी भी तीर्थ की यात्रा करने का फल नहीं मिलता।[1]

किसी भी तीर्थ की यात्रा करते समय अथवा तीर्थ स्थान पर रहते समय यात्री को काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि मनोविकारों से बचना चाहिए। तीर्थयात्रा के दौरान किसी का अपकार करना, छोटा-बड़ा, अमीर-गरीब, ऊंच-नीच, छूत-अछूत, आदि में भेदभाव करना, पाप कहा गया है।

तीर्थ यात्रा करने वाले सारे यात्री बिना जाति-भेद के एक समान होते हैं। शास्त्रों के अनुसार तीर्थ पर, तीर्थ यात्रा में विवाह संस्कार के समय, युद्ध के दिनों में, देश में क्रान्ति के समय तथा नगर—ग्राम में आग लग जाने पर छुआछूत का दोष नहीं रहता।[2]

संक्षेप में मानसिक संतापों से मुक्ति, संतों और भक्तों के दर्शन, भगवान् का स्मरण, आत्मा का उद्धार, देश के विभिन्न

---

1. अश्रद्धधानः पापात्मा नास्तिकोच्छिन्न संशयः।
   हेतुनिष्ठश्च पंचैते न तीर्थफल भागिनः॥
   —वायु पुराण : तीर्थकाण्ड, 3/29
2. तीर्थे विवाहे यात्रायां संग्रामे देश विप्लवे।
   नगर ग्राम दाहे च स्पृष्टा स्पृष्टि र्न दुष्यति॥
   —तीर्थप्रकाश, पृ० 40

भागों से आए लोगों से भावात्मक मेल-जोल आदि तीर्थयात्रा के विभिन्न फल हैं। इसके अतिरिक्त तीर्थ स्थानों पर भगवान् की साधना करने वाले संत-महात्माओं की संगति और दर्शन से मनुष्य अधर्म से धर्म की ओर, असत्य से सत्य की ओर और पाप से पुण्य की ओर उन्मुख होता है। इसलिए मन की शान्ति और आत्मा के उद्धार की कामना करने वाले व्यक्तियों को अवश्य ही तीर्थ यात्रा करनी चाहिए। [1]

□

1. तीर्थेषु लभ्यते साधु रामचन्द्र परायणः।
   पददर्शनं नृणां पापं राशिदाहा शुशुक्षणिः।
   तस्मात् तीर्थेषु गन्तव्यं नरैः संसारभीरूभिः॥

—पदम पुराणः पातालखण्ड, 19/16-17

माता वैष्णो और उनकी पवित्र गुफा

जिस प्रकार भगवान विष्णु ने धर्म की स्थापना तथा अधर्मियों के नाश और नियंत्रण के लिए समय-समय पर विभिन्न नाम, रूपों में अवतार धारण किए, उसी प्रकार उनकी शक्ति ने भी अवतार लेकर अधर्म और अत्याचार करने वाले दानवों का नाश तथा सज्जन लोगों का परित्राण किया।[1] यह शक्ति कभी शक्तिमान के साथ अवतरित होती है जैसे—सीताराम, राधाकृष्ण तथा कहीं वह स्वतंत्र स्थिति में रहती है जैसे—माता वैष्णो, माता ज्वालामुखी, माता चिन्त्यपूर्णी आदि। स्वतंत्र स्थिति में भी शक्ति सब प्रकार की समृद्धि और लोकसिद्धि देने वाली है।

शास्त्रों में भगवान् विष्णु की शक्ति को वैष्णवी कहा गया है।[2] ये सारे संसार का पालन करने वाली हैं।[3] वे विष्णु की भक्त हैं, विष्णु के रूप वाली हैं, और विष्णु की शक्तिस्वरूप हैं, विष्णु के द्वारा ही सृष्टि में सृजन की गई हैं, इसी कारण से इन्हें वैष्णवी कहा गया है।[4] जिस प्रकार भगवान विष्णु ने राम के रूप में रावण का, तथा कृष्ण के रूप में कंस का संहार किया था, उसी प्रकार उनकी शक्ति ने वैष्णवी रूप में महाबली दैत्यराज महिषासुर का बध किया था। डोगरा भूमि में वैष्णवी का नाम बदलकर वैष्णो हो गया है और इसके साथ

---

1. दुर्गा सप्तशती 11/55
2. ब्रह्मवैवर्त पुराण : प्रकृतिखण्ड, 66/18
3. वराहपुराण 10/28
4. ब्रह्मवैवर्त पुराण : प्रकृति खण्ड, 57/21

माता शब्द अनिवार्य रूप से जोड़ दिया गया है। इसका कारण यह है कि माताओं में वैष्णवी के समान कोई दूसरा नहीं।[1] पुराणों में वैष्णवी को अपने सेवकों का माता की तरह हित करने वाली बताकर उन्हें मातृकाओं में प्रमुख स्थान दिया गया है।[2]

डोगरी भाषा में कई नाम वाचक-स्त्रीलिंग शब्दों को संज्ञा और संबोधन में 'ओ' लगाकर बोला जाता है। जिस प्रकार तारमती को तारो, कृष्णा को कृष्णो और दुर्गा को दुर्गो के रूपमें बोला जाता है उसी प्रकार उच्चारण की सुविधा के लिए वैष्णवी शब्द का उच्चारण वैष्णो शब्द के रूप में किया जाने लगा। धीरे-धीरे वैंष्णवी शब्द का प्रयोग केवल संस्कृत भाषा की रचनाओं में रह गया और वैष्णो शब्द रूढ़ होकर जनता में लोकप्रिय हो गया और आज भारतवर्ष के सभी प्रदेशों में इस नाम से कोई अन्य देवी नहीं, डोगरा देश के शतश्रृंग पर्वत की पवित्र गुफा में विष्णु की भक्ति, विष्णु की पूजा और लाखों वर्षों से विष्णु की तपस्या करने वाली माता वैष्णो को ही लिया जाता है।[3]

आधुनिक काल में माता वैष्णो की गुफा भारतवर्ष के लाखों यात्रियों की श्रद्धा का केन्द्र बनी हुई है। समुद्रतल से 5700 फुट की ऊँचाई पर स्थित यह गुफा वास्तव में माता वैष्णो का मन्दिर है जिसकी गणना आज उत्तर भारत के महान् शक्ति-तीर्थ के रूप में की जाती है। इस गुफा की लम्बाई लगभग एक सौ फुट, चौड़ाई तीन फुट से छः फुट, ऊँचाई दो फुट से लेकर

---

1. पदम पुराण : सृष्टि खण्ड, 17/216
2. ब्रह्मवैवर्त पुराण : प्रकृति खण्ड 66/20
3. ब्रह्मवैवर्त पुराण : प्रकृति खण्ड, 1/69-70

छः फुट तक है। चरणगंगा के उद्गम स्थान पर विद्यमान यह प्राकृतिक गुफा आज करोड़ों हिन्दुओं को अपनी ओर आकर्षित कर रही है।

जम्मू नगर से 45 मील की दूरी पर उत्तर-पश्चिम में शतशृंग नामक पर्वत है। कटरा नगर इस पर्वत के चरणों में बसा हुआ है। इस पर्वत की सौ से अधिक छोटी-बड़ी चोटियां हैं जिसके कारण इसे शतशृंग नाम दिया गया था। इस पर्वत के मध्य के तीन शृंग या कूट दूसरों से कुछ ऊंचे हैं, अत: स्थानीय लोग इसके इस भाग को त्रिकूट भी कहते हैं। पुराण साहित्य में इस पर्वत का वर्णन करते हुए कहा गया कि है इस पर्वत की गुफाएं अत्यन्त रमणीक और निर्मल वारिधाराओं से सुशोभित हैं। यह देवता, गन्धर्व आदि से सुशोभित स्थान है।[1] इस शतशृंग पर्वत के मध्यभाग से प्रवाहित चरणगंगा की रमणीक घाटी में माता वैष्णो की पवित्र गुफा है।

भूगर्भ-शास्त्रियों की दृष्टि में यह गुफा अत्यंत प्राचीन है। इस गुफा के काल का निर्धारण करने के लिए भूगर्भ वैज्ञानिकों ने इस गुफा के आस-पास के क्षेत्र में पाई जाने वाली चट्टानों का गम्भीरता से अध्ययन किया है। उनके मत में जम्मू रीजन में आग्नेय, 'IGNEOUS' तहदार 'SEDIMENTARY' और तबदील शुदा 'METAMARPHIC' चट्टानें मिलती हैं। आग्नेय चट्टानें पीर पंचाल, डिगडोल, और रामसू के क्षेत्र में, तहदार चट्टानें—नगरोटा, कुद्ध, बटोत, रियासी और पुंछ के क्षेत्रमें तथा तबदील शुदा चट्टानें—डोडा, किश्तवाड़ और भद्रवाह के क्षेत्र में मिलती हैं।

माता वैष्णो की गुफा जम्मू प्रदेश के एक प्रसिद्ध पर्वतीय

---

1. मार्कण्डेय पुराण : जम्बूद्वीप वर्णन

नगर उधमपुर मण्डल के अन्तर्गत चिड़िआई नामक गांव से लेकर रियासी तक लगभग मीलों तक फैलो हुई तहदार चट्टान में बनी हुई है। चट्टानों की आयु सीमा निश्चित करने के लिए भूगर्भ वैज्ञानिक खनिज पदार्थों में मिलने वाले यूरोनियम, थोरियम और रेडियम नामक द्रव्यों का परीक्षण करते हैं। इसी प्रकार का एक और पदार्थ—सुरमा **GALYNA** है जिसकी परीक्षा करके भूगर्भ वैज्ञानिक किसी चट्चान की आयु सीमा बताते हैं। माता वैष्णो की गुफा से सम्बन्धित चट्टान की आयु सीमा निश्चित करते समय वैज्ञानिकों ने इसी द्रव्य का सहारा लिया है।

कटड़ा से 45 मील की दूरी पर उत्तर-पश्चिम में स्थित रियासी नामक नगर के क्षेत्र में आबाद द्रावी, खैर, और सैंरसन्धु नाम के गांवों में जो सुरमा मिला है उसकी आयु सीमा श्री पी० के० राहा, श्री एम०सी० चन्दी और श्री एस०एन० बालासुब्रह्मण्यम आदि भूगर्भ वैज्ञानिकों ने रेडियो एक्टिव द्वारा अढ़ाई अरब वर्ष स्वीकार की है।[1] जम्मू नगर के गवर्नमेंन्ट गांधी मैमोरियल साइंस कॉलेज में भूगर्भ विभाग के अध्यक्ष डॉ० सतीश कुमार चड्ढ़ा भी अपने चट्टानों सम्बन्धी शोध प्रबन्ध में इसी निष्कर्ष पर पहुंचे हैं।[2] इससे स्पष्ट होता है कि प्रकृति निर्मित यह पवित्र गुफा बहुत पुरानी है और जब माता वैष्णो आदि कुमारी स्थान से महिषासुर का पीछा करती हुई इस स्थान पर पहुंची तो गुफा के बाहर महिषासुर का संहार करने के उपरान्त उन्होंने इसो गुफा में तप करने का निर्णय किया था।

---

1. जनरल ऑफ जिओग्राफीकल सोसाइटी ऑफ इण्डिया, भाग, 19/न०5 पृ० 221-223।
2. डॉ० एस० के० चड्ढा, सैडीमैंटोलाजिकल स्टडीज ऑफ द राक युनिटस ऑफ एरिया बिटवीन जंगल गली एण्ड सलाल, पृ० 21।

महिषासुर के सम्बन्ध में कहा गया है कि मनु के रंभ और करंभ नाम के दो पुत्र थे। दोनों भाईयों को संसार के सभी सुख प्राप्त थे, पर दोनों के घर कोई संतान नहीं थी। यह एक ऐसा अभाव था जो उन दोनों को हर समय परेशान करता था। इस समस्या से छुटकारा पाने के जब दूसरे सभी उपाय सफल न हुए तो उन दोनों ने तप करने का निश्चय किया। वे एक रमणीक एकान्त नदी तट पर गए। करंभ नदी के जल में खड़ा होकर तप करने लगा और करंभ नदी के किनारे अपने आसन के पांच तरफ उपलों की आग जलाकर 'पंचाग्नि तप' करने लगा।

उन दोनों असुरों द्वारा किये जाने वाले कठोर तप से देवताओं के राजा इन्द्र को संशय हुआ। इसके पहले भी अनेक असुर तपस्या के द्वारा कभी ब्रह्मा, कभी विष्णु और कभी शिव से वरदान पाकर देवताओं को सता चुके थे। उन दोनों असुरों द्वारा भविष्य में किए जाने वाले उपक्रमों की आशंका से भयभीत होकर इन्द्र ने ग्राह (तेंदुए)का रूप धारण किया और नदी में प्रवेश करके करंभ का संहार कर दिया।

भाई की मृत्यु से करंभ अत्यंत दुःखी हुआ। इन्द्र ने बिना किसी अपराध के उसके भाई का संहार किया था, पर अपराधी इन्द्र को किसी ने कुछ नहीं कहा। क्रोध और विवशता की भावना से आक्रांत होकर रंभ ने भी अपना सिर अग्निदेव को भेंट करने का संकल्प कर लिया। यज्ञ के कुण्ड में अग्नि जलाकर होम और पूजा-पाठ करने के उपरान्त उसने जैसे ही अपना सिर अग्निदेवता को भेंट करने के लिए काटना चाहा तभी अग्निदेवता साकार रूप में प्रकट हो गए और उन्होंने रंभ का हाथ पकड़ लिया।

जब रंभ ने उन्हें बड़ी नम्रता से अपनी दुःखभरी कहानी

सुनाई और उन्हें यह बताया कि उसका भाई पुत्र प्राप्ति की कामना मन में लिए ही मृत्यु को प्राप्त हो गया है तो अग्निदेव ने रंभ की इच्छा के अनुसार उसे देवता, दानव और मानवों से अजेय अति शक्तिशाली, तथा अपनी इच्छा के अनुसार रूप धारण कर सकने में समर्थ, पुत्रप्राप्ति का वरदान दिया। इसके साथ ही अग्निदेवता ने यह भी कहा कि जिस सुन्दरी पर उसका मन डोल उठेगा, उसी के गर्भ से उसे वीर और पराक्रमी पुत्र प्राप्त होगा।

इन्हीं दिनों सुपार्श्व नाम के ऋषि मन्दराचल पर्वतपर तपस्या कर रहे थे। एक दिन विप्रचिति नामक दैत्य की माहिष्मती नाम की कन्या अपनी सखियों के साथ उस पर्वत की घाटी में बिहार करने के लिए आई। वहां पर भ्रमण करते समय उस दैत्य कन्या ने सुपार्श्व ऋषि के सुन्दर और रमणीक तपोवन को देखा। स्थान की रमणीयता और उसके शान्त तथा एकान्त वातावरण से वह इतनी अधिक प्रभावित हो गई कि उसने उस ऋषि को डरा-धमका कर उस स्थान से हटाकर स्वयं वहां पर सखियों समेत बिहार करने का निश्चय किया। दैत्य-कन्या होने के कारण उसे सभी प्रकार की छल और कपट विद्या आती थी। उसने तत्काल एक महिषी, भैंस का रूप धारण किया और अपने सींगों को घुमाते हुए भयावह गर्जना करके ऋषि को डराने का यत्न करने लगी।

सुपार्श्व ऋषि ने ज्ञान-दृष्टि से महिषी का रूप धारण करने वाली राजकुमारी माहिष्मती को पहचान लिया। उसके अनुचित व्यवहार से क्रोधित होकर ऋषि ने उसे महिषी ही हो जाने का शाप दिया। पर जब उसने ऋषि से अपने अपराध के लिए क्षमा मांगी तथा बार-बार प्रार्थना के स्वर में शाप से

मुक्त होने का उपाय पूछा तो ऋषि को उस पर करुणा आ गई। उन्होंने बताया कि महिषी के रूप में एक पुत्र को जन्म देकर वह शाप से मुक्त हो जाएगी। इसके बाद माहिष्मती नाम की वह राजकुमारी महिषी के वेश में इधर-उधर घूमने लगी।

इधर रंभ अपने घर पहुंचा। असुर होने के कारण उसमें पशुभाव तो था ही एक दिन कामभाव से एक युवा महिषी पर उसकी दृष्टि पड़ गई। वह उस पर आसक्त हो गया। इस महिषी से जो पुत्र हुआ, उसका नाम महिषासुर रखा गया। महिषासुर को जन्म देकर राजकुमारी माहिष्मती शाप से मुक्त हो गई।

बड़ा होने पर महिषासुर अपने पिता के तप तथा अग्निदेव के वरदान के प्रभाव से महा शक्तिशाली और पराक्रमी हुआ। सभी प्रमुख असुरों ने उसकी सत्ता स्वीकार कर ली और वह उन सबका राजा बन गया।[1]

धीरे-धीरे उसके पराक्रम से आतंकित होकर अन्य असुर राजा उसके वश में होते गए और जब पृथ्वी पर उसने पूरा अधिकार प्राप्त कर लिया तो स्वर्ग के सिंहासन को प्राप्त करने की इच्छा से उसने इन्द्रपुरी पर आक्रमण किया। भयानक समर के बाद देवता पराजित होकर स्वर्ग लोक से भाग गए। इस प्रकार पृथ्वी और स्वर्ग दोनों पर अपना शासन स्थापित करके महिषासुर निश्चिन्त होकर राज्य का उपभोग करने

---

1. (क) पद्म पुराण : सृष्टि खण्ड, अ० 30
   (ख) शिव पुराण : उमासंहिता, अ० 46
   (ग) वामन पुराण : अ० 17-20
   (घ) देवी भागवत : स्कन्ध 5, अ० 2-19

लगा। वराह पुराण के अनुसार महिषासुर से पीड़ित इन्द्रादि देवता ब्रह्मा और शिव के नेतृत्व में बैकुण्ठ में भगवान् विष्णु के पास पहुंचे। सारा वृत्तान्त कहा। महिषासुर के आक्रमण और अत्याचारों के विषय में बताया।

भगवान् विष्णु ने ज्ञान-दृष्टि से जान लिया कि महिषासुर की मृत्यु केवल एक नारी के द्वारा संभव है। उन्होंने देवताओं से कहा :—

"वर प्राप्त महावली महिषासुर को देवताओं की सामूहिक शक्ति से जो शक्ति प्रकट होगी, वही उसका संहार करेगी। तुम सब अपनी शक्तियों से अनुरोध करो। साथ ही हमारी देवियां भी प्रार्थना में सम्मिलित हो जाएं, जिसके फल स्वरूप सारी शक्तियों और देवों की शक्ति रूपा एक महाशक्ति शालिनी देवी प्रकट हो जाए। फिरसभी देवता उसे अपने-अपने अलौकिक दिव्य अस्त्र-शस्त्र-प्रदान करें जिससे वह देवी उस दुराचारी का संहार कर सके।"[1]

भगवान् विष्णु के परामर्श का सभी देवताओं ने स्वागत किया। तभी चक्रधारी विष्णु के मुख से एक महान् तेज प्रकट हुआ। इसके बाद ब्रह्मा, शिव, इन्द्र आदि देवताओं के शरीर से भी तेज प्रकट हुए। फिर सभी तेज मिलकर एक हो गए। एक होने पर वह तेज एक नारी के रूप में परिवर्तित हो गया।[2] और उसके प्रकाश से तीनों लोक भर गए। समस्त

---

1. शिव पुराण : उमा संहिता, अध्याय 46
2. निकला तब उनके तनु से तेज एक अकलंक,
   ब्रह्मा, रूद्र, इन्द्रादि सुरों के तनु से भी तत्काल।
   निकले ज्योति : पुंज और तब मिले उसी में हाल।
   —मैथिलीशरण गुप्त, शक्ति : पृ० ।।

देवताओं की वह सम्मिलित शक्ति एक महाशक्तिशाली मूर्ति के रूप में प्रकट हुई, जिसे देखकर महिषासुर से पीड़ित देवता अत्यन्त प्रसन्न हुए ।[1]

देवताओं ने मिलकर देवी की स्तुति की। महिषासुर के अन्याय, अनाचार और अत्याचारों का वर्णन किया और फिर उसके विनाश के लिए अनेक दिव्य अस्त्र-शस्त्र प्रदान किए। शिव ने त्रिशूल, कृष्ण ने चक्र, वरुण ने शंख, अग्नि ने शक्ति, मरूत् ने धनुषवाण, इन्द्र ने बज्र तथा घण्टा, यमराज ने कालदण्ड, वरूण ने पाश, प्रजापति ने रूद्राक्षमाला तथा ब्रह्मा ने कमण्डल प्रदान किया। इसके अलावा सूर्य ने किरणें, काल ने ढाल तथा तलवार, समुद्र ने वस्त्र तथा अलंकार, विश्वकर्मा ने परशु, कुबेर ने सुरापूर्ण पान-पात्र, शेषनाग ने नागहार तथा हिमाचल ने सवारी के लिए सिंह तथा अनेक प्रकार के रत्न भेंट किए ।[2]

फिर देवी को सब देवताओं ने बार-बार प्रणाम किया और महिषासुर से सुरक्षा करने की प्रार्थना की। देवी ने देवताओं को अभय का वचन दिया और फिर लीला करने के विचार से अपनी कुछ सेविकाओं के साथ शतशृंग पर्वत पर आ गईं, क्योंकि इस पर्वत पर महिषासुर और उसके सेवकों का आना-जाना था ।[3] देवताओं की सहायता करने के उद्देश्य से महर्षि नारद घूमने के बहाने महिषासुर के पास गए। देवी के अलौकिक रूप-सौन्दर्य का वर्णन करके उससे विवाह कर

---

1. सबकी वह सम्मिलित शक्ति थी, महाशक्ति की मूर्ति ।

—मैथिलीशरण गुप्त, शक्ति : पृ० ।।

2. दुर्गा सप्तशती : अध्याय 2-3

3. वराह पुराण अध्याय, 81

लेने की प्रेरणा दी। महिषासुर देवी के रूप की प्रशंसा सुनकर व्याकुल हो उठा। वह दिन-रात उसी का चिन्तन करने लगा। जब उसने अपने मंत्रियों से नारद द्वारा वर्णित कन्या को पत्नी रूप में प्राप्त करने की बात कही तो उसके मंत्री प्रद्यस ने उसे समझाते हुए कहा "नारद जिस कन्या की बात कर गए हैं, वे तो वैष्णो देवी हैं।[1]

इस पर महिषासुर ने अपने मंत्री को आदेश दिया कि साम, दाम, भेद किसी भी उपाय से उस कन्या को उसके लिए सुलभ करे। यदि वह इन उपायों से वश में नहीं आए तो बाद में बल प्रयोग में भा संकोच नहीं किया जाएगा।

जब महिषासुर का दूत विवाह का प्रस्ताव लेकर शतशृंग पर्वत पर पहुंचा तो उस समय देवी उस स्थान पर विराजमान थीं, जिसे आजकल अद्धकुआरी कहा जाता है। महिषासुर के मन्त्री प्रद्यस द्वारा प्रस्तुत विवाह सम्बन्धी प्रस्ताव का उत्तर देवी की सेविका जया ने यह कह कर दिया कि देवी ने आरम्भ से ही कुमारी रहने का व्रत धारण कर रखा है, अतः वे महिषासुर से विवाह नहीं कर सकतीं।[2] दूत द्वारा बारबार निवेदन करने पर देवी ने उसे यह कहकर विदा कर दिया कि उन्होंने सदा के लिए कुमारी रहने का निर्णय किया है।

जिस स्थान पर देवी ने कुमारी व्रत धारण करके तपस्या की थी तथा अपने आदि कुमारी होने की घोषणा की थी, वह

---

1. या सा ते कथिता दैत्य नारदेन महासती।
   सा शक्तिः परमा देवी वैष्णवी रूपधारिणी॥
   —वराह पुराणः 93/9
2. कन्यार्थी वदते यत्तु यत्त्वया समुदीरितम्।
   यदिनाम व्रतं चास्याः कौमारं सर्वकालिकम्॥
   —वराह पुराण : 95/24

स्थान भी आदिकुमारी के नाम से प्रसिद्ध हो गया और फिर कालक्रम से स्थानीय प्रभाव के कारण आदिकुमारी नाम अद्धकुआरी रूप में बोला जाने लगा।

अपने दूत से सारी बात जानकर महाबली महिषासुर ने देवी को बलात् वरण करने के लिए जब आक्रमण किया तो देवी ने अपनी बीस भुजाएं कर लीं। और सिंह पर सवार होकर युद्ध के लिए तत्पर हो गईं।[1] महिषासुर के प्रमुख सामन्तों और सेनापतियों का संहार करके जब देवी महिषासुर की ओर बढ़ी तो भीषण माया युद्ध करने के उपरान्त भयभीत वह असुर अपनी प्राण रक्षा के लिए चरण गंगा की घाटी की ओर भागा। भागते-भागते जब वह गुफा के द्वार तक पहुंच गया तो वहां देवी ने उसे पकड़ कर अपने पैरों के नीचे दबा कर त्रिशूल से मार दिया। इसके बाद उसके सैनिकों को डराने के विचार से जो कि उसके पीछे-पीछे आ रहे थे, देवी ने तलवार से उसका सिर धड़ से अलग कर दिया। उस कटे सिर को देवी ने त्रिशूल की नोक पर उठाकर तेज गति से घुमाते हुए दूर पर्वत पर फेंक दिया।[2] महिषासुर का सिर जिस स्थान पर जाकर गिरा था बाद में वह स्थान भैरव घाटी "भयानक घाटी" के नाम से प्रसिद्ध हो गया जो कालक्रम से भैरोंघाटी के रूप में बोला जाने लगा।

गुफा के द्वार के पास जब देवी ने महिषासुर का संहार कर दिया तो उसके उपरान्त देवता इस स्थान पर उपस्थित हुए।

---

1. वराह पुराण : 95/43

2. शिरश्चिच्छेद खड्गेन् तत्र चान्त: स्थित: पुमान्।

वराह पुराण : 95/48

देवी की स्तुति की।[1] उपकार के लिए धन्यवाद किया, भविष्य में भी सहायता करने का वचन लिया।[2] देवी ने सदैव सहायता करने का वचन देकर देवताओं को तो विदा कर दिया परन्तु स्वयं अब उसी स्थान पर निवास करने का निश्चय कर लिया।[3]

यद्यपि उपासना और तपस्या के लिए आदि कुमारी स्थान की गुफा भी उपयुक्त थी, परन्तु यह नवीन घाटी अधिक शांत, सुखद और एकांत थी। हरीतिमा से आपूर्ण विस्तृत वन, मन-मोहक पर्वत श्रेणियां, तुषारमण्डित गिरिशिखिर, गीत गाते हुए झरने, कलरव करते हुए विविध रंगों के पक्षी, मधुर ध्वनि से प्रवाहित होती हुई चरणगंगा; प्रकृति की इस विभूति को देखकर देवी ने इस स्थान को अपनी तपोभूमि बनाने का निर्णय किया।

आदिकुमारी स्थान पर जिस प्रकार माता ने तपस्या के निमित्त एक लघुगुफा में निवास किया था, ठीक उसी प्रकार इस स्थानपर भी चरणगंगा के उद्‌गम स्थान तक प्रकृति निर्मित गुफा में देवी ने अपना तप स्थान बना लिया और अपने प्रमुख तीन स्वरूपों के प्रतीकों के रूप में तीन पिण्डियों की स्थापना

---

1. सर्वगे सर्व देवेशि विश्वरूपिणी वैष्णवी।

—वराह पुराण : 95/52

2. इत्थं यदायदा बाधा दानवोत्था भविष्यति।
तदा तदा वतीर्याहं करिष्याम्यरि संक्षयम्।

—दुर्गा सप्तशती : 11/55

3. एवमस्त्विति तान्देवानुक्त्वा देवी परापरा।
विससर्ज ततो देवान् स्वयं तत्रैव संस्थिता॥

—वराह पुराण : 95/64

कर दी। इसका कारण यह था कि अपने प्रादुर्भावकाल में देवी ब्रह्मा, विष्णु और शिव के प्रतीक शुक्ल, रक्त और कृष्ण इन तीन वर्णों से सुशोभित थीं। उस समय ब्रह्मा ने देवी से कहा था :—

"हे देवी! तुम्हारा नाम त्रिकला होगा। तुम संसार की सदा रक्षा करोगी। गुणों के अनुसार तुम्हारे अन्य भी बहुत से रूप और नाम होंगे। तुममें जो तीन वर्ण दिखाई पड़ते हैं इनसे तुम अपनी तीन मूर्तियां बना लो।"[1]

इस पर देवी ने अपने श्वेत, रक्त और श्याम रंग से युक्त तीन पिण्डरूप बना लिए। ब्रह्मा के अंश से महासरस्वती, विष्णु के अंश से महालक्ष्मी तथा शिव के अंश से महाकाली कहलाईं।[2]

शतश्रृंग पर्वत की गुफा में तीन पिण्डियां इन तीन देवी रूपों की प्रतीक हैं और इन तीन स्वरूपों का समवेत नाम है माता वैष्णो। अर्थात जो महालक्ष्मी है, वही महाकाली है।[3] एक ही महाशक्ति के ये तीन अलग-अलग नाम हैं और सामूहिक रूप से उन्हें माता वैष्णो के नाम से अभिहित किया जाता है। जिस प्रकार परब्रह्म परमात्मा एक होने पर भी

---

1. त्रिवर्णा च कुमारी ता कृष्णा शुक्ला च पीतिका।

—वराह पुराण : 90/21

2. एवमुक्तातदा दैवे रकरोत् त्रिविधान् तनुम्।
सितां रक्ता तथा कृष्णां त्रिमूर्तित्वं जगाम सा।

—वराह पुराण : 90/26

3. महालक्ष्मी महाकाली सैव प्रोक्ता सरस्वती।

—वैकृतिक रहस्य, श्लोक-25

ब्रह्मा, विष्णु और शिव, इन तीन रूपों में विभक्त है, ठीक उसी प्रकार आदि शक्ति भी प्रयोजनवश तीन रूपों वाली हो गई।[1]

माता की इस गुफा का द्वार अत्यन्त संकरा है। इसमें प्रवेश के बाद कुछ ही आगे बढ़ने पर चरणगंगा के शीतल जल की धारा में चलते हुए धीरे-धीरे अग्रसर होना पड़ता है। गुफा का मार्ग भी अत्यन्त संकरा और कठिन है। यदि उसमें बिजली अथवा अथवा अन्य रोशनी न हो तो उसमें कई यात्री, विशेषत: बाल-यात्री बेचैनी अनुभव करने लगते हैं। माता की कृपा से भजन-कीर्तन करते, जयकारे लगाते हुए यात्रियों की अन्तहीन कतार आगे बढ़ती रहती है। चरणगंगा की धारा के वाम भाग में एक प्राकृतिक शिला खण्ड भी साथ-साथ आगे तक गया है। इस शिलाखण्ड पर क्रम से, पाण्डवों की प्रतीक पांच पिण्डियां, फिर सप्तर्षियों की प्रतीक सात पिण्डियां तथा इसके बाद एक पत्थर का खम्भा है जिसे प्रह्लाद की यात्रा का प्रतीक तप्त स्तम्भ अथवा तत्ता थम्म कहते हैं। कुछ और आगे बढ़ने पर शेर का पंजा तथा शेर का मुख बना हुआ है। इस स्थान से कुछ आगे जहां पर गुफा का नया द्वार है गुफा की छत पर शेषनाग की प्राकृतिक मूर्ति है। शेषनाग की आकृति, उनके अनेक मुख तथा अन्य छोटे-छोटे सांपों की आकृतियां आश्चर्य में डालने वाली हैं।

इस स्थान से आगे माता के दरबार में ले जाने वाली सीढ़ियों का क्रम आरम्भ होता है। इनका निर्माण गुफा के निगर्मन द्वार के बनाने के समय किया गया था। कुल चौदह

---

1. परमात्मा यथा देव एकैव त्रिधा स्थितः।
प्रयोजनवशात् शक्ति एकैव त्रिधाऽभवत्॥

—वराह पुराण : 96/60

सीढ़िया हैं, पहली बारह सीमेंट की तथा अन्तिम दो संगेमरमर की। यह सीढ़िया समाप्त होते ही माता वैष्णो जी का दरबार आ जाता है जिसकी शोभा एकदम निराली है। प्राकृतिक शिलाखंड पर उभरी तीन पिण्डियां हैं, दक्षिण भाग में महा-सरस्वती की, मध्य में वैष्णवी की तथा वामभाग में महाकाली की। मूल पराशक्ति एक है, अतः यह पिण्डी भी मूल से एक है और लगभग पांच-छः फुट लम्बी है। ऊपर आकर इसी पिण्डी के सात्विक, राजसिक और तामसिकभेद से तीन अलग-अलग रूप हो गए हैं। इसी कारण से माता महासरस्वती की पिण्डी सफेद रंग की, माता महालक्ष्मी की लाल रंग की और माता महा-काली की काले रंग की है। माता महालक्ष्मी की पिण्डी अन्य दोनों पिण्डियों से कुछ बड़ी है।

ये तीनों पिण्डियां चांदी के पत्रों से मण्डित हैं तथा सबके सिर पर चांदी के मुकुट और सोने के छत्र शोभायमान हैं। देवी के तीन रूपों का प्रतीक इन तीन पिण्डियों की पृष्ठभूमि में इन्हीं देवियों की साकार मूर्तियों की पृष्ठभूमि में इन्हीं देवियों की साकार मूर्तियाँ स्थापित हैं। माता महाकाली की पिण्डी के पास इनकी दो मूर्तियां हैं। एक काले रंग की अष्टधातु की तथा दूसरी संगेमरमर की। माता महालक्ष्मी की पिण्डी के पीछे महाराजा गुलाबसिंह द्वारा समर्पित पैंसठ "65" तोले सोने की महालक्ष्मी की मूर्ति है जो कमल के आसन पर विराजमान है। इसके पीछे पवित्र गुफा के नए द्वार के उद्घाटन समारोह के अवसर पर डा० कर्णसिंह जी द्वारा समर्पित बाईस "22" तोले सोने से निर्मित सिंह सवार माता वैष्णो देवी जी की मूर्ति है। माता महासरस्वती की पिण्डी के पीछे भी एक पीतल की तथा एक संगेमरमर की मूर्ति है।

माता महालक्ष्मी की पिण्डी के बिल्कुल सामने भगवान् शिव की सर्प से सुशोभित लघु आकार की पिण्डी है। तथा बाईं ओर की दीवार में भगवान् गणेश की प्राकृतिक मूर्ति है। गणेश जी की एक मूर्ति गुफा के प्रवेश द्वार के वामभाग में तथा इसके ही कुछ आगे हनुमान जी की प्राकृतिक मूर्ति है। गुफा में जो तीन पिण्डियां हैं उनमें मध्यवर्ती पिण्डी माता महालक्ष्मी की है। महालक्ष्मी विष्णु की शक्ति हैं और इनका दूसरा नाम वैष्णवी है। यह वैष्णवी पराशक्ति है।[1] परमात्मा की और भी नानाविध शक्तियां हैं।[2] इस प्रकार की अनेक शक्तियों में श्रीविष्णु की अहंता नाम की एक शक्ति है, वही महालक्ष्मी है। एक स्थान पर स्वयं महालक्ष्मी ने इन्द्र से कहा है, कि "उस परब्रह्म की, जो चन्द्रमा की चांदनी को तरह समस्त अवस्थाओं में साथ देने वाली जो परमशक्ति है, व सनातनी शक्ति में ही हूँ।[3] मेरा दूसरा नाम नारायणी भी है। मैं नित्य, निर्दोष, सीमारहित, कल्याण गुणों वाली नारायणी नाम वाली वैष्णवी परा सत्ता हूं।[4]

शास्त्रों के अनुसार जो देवो परमशुद्ध सत्वस्वरूपा है, उनका नाम महालक्ष्मी है। परम परमात्मा श्रीहरि की वे शक्ति हैं। हजार पाखुड़ियों वाला कमल उनका आसन है। इनके मुख की शोभा तपे हुए स्वर्ण के समान है और इनका

---

1. विष्णुशक्ति : पराप्रोक्ता। —विष्णु पुराण : 6/7/61
2. परास्य शक्तिविविधैव श्रूयते। —श्वेता : 6/8
3. लक्ष्मीतन्त्र : 2/11/12
4. नित्य निर्दोष निस्सीम कल्याण गुण शालिनी।
   अहं नारायणी नाम सा सत्ता वैष्णवी परा॥
   —लक्ष्मीतन्त्र : 3/1

रूप करोड़ों चन्द्रमाओं की कान्ति से सम्पन्न है। माता महा-लक्ष्मी के मुख पर सदैव मुस्कान व्याप्त रहती है। सम्पत्तियों की ईश्वरी होने के कारण अपने सेवकों के ये धन, ऐश्वर्य, सुख, सिद्धि और मोक्ष प्रदान करती है।

भगवान् श्रीहरि की माया तथा उनके तुल्य होने के कारण इन्हें नारायणी कहा जाता है। वैष्णवी और दुर्गा इनके दूसरे प्रसिद्ध और प्रमुख नाम हैं। जैसे—नदियों में गंगा, देवताओं में श्रोहरि तथा वैष्णवों में शिव श्रेष्ठ स्वीकार किये गए हैं। उसी प्रकार देवी के सभी नाम रूपों में वैष्णवी नाम से प्रसिद्ध भगवती महालक्ष्मी श्रेष्ठ हैं।

माता महालक्ष्मी अत्यन्त सुन्दर, संयमशील, शान्त, मधुर और कोमल स्वभाव की हैं। वे काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, अहंकार आदि से रहित हैं।

अपने भक्तों पर कृपा करते रहना और अपने स्वामी श्री हरि से प्रेम करना उनका स्वभाव है। वे मधुर और प्रिय लगने वाले वचन ही बोलती हैं, कभी अप्रिय वचन नहीं कहतीं। वे कभी क्रोध और हिंसा नहीं करतीं।

सारा संसार, सारी सम्पतियां इनका स्वरूप है। संसार में जितने भी प्रकार के अन्न, फल, फूल, वनस्पतियाँ आदि खाद्य-पदार्थ हैं, जिनसे प्राणियों के जीवन की रक्षा होती है, वे सब इनके ही रूप हैं। जिस धन से मानव मात्र का सांसारिक कार्य-व्यापार संचालित होता है उसकी ये अधिष्ठात्री देवी है। लक्ष्मी से हीन दरिद्र व्यक्ति का जीवन जीते हुए भी मृत के समान होता है और जिस पर लक्ष्मी की कृपा होती है वह सुखी और सम्मानित जीवन व्यतीत करता है। जो लक्ष्मी से हीन है, वह भाई-बन्धुओं और मित्रों से हीन है। जो लक्ष्मी से

युक्त है, वह वन्धु-बांधवों और मित्रों से घिरा रहता है। माता महालक्ष्मी की कृपा से ही मानव की शोभा होती है। वह सुखी और निश्चिन्त जीवन बिता सकता है। धर्म काम और मोक्ष उसके लिए सुलभ हो जाते हैं।

ये शक्ति सबकी कारण रूप है। सर्वोच्च पतिव्रता है और बैकुण्ठ लोक में अपने स्वामी श्रीहरि की सेवा में लीन रहती है। ये देवी वैकुण्ठ में गृहलक्ष्मी, क्षीर समुद्र में लक्ष्मी, इन्द्र के स्वर्ग में स्वर्गलक्ष्मी, गृहस्थों के घर में गृहलक्ष्मी, व्यापारियों के यहां व्यापार लक्ष्मी, ग्राम में ग्रामदेवी तथा घर-घर में गृहदेवी के रूप में रहती है।

संसार के सभी प्राणियों और वस्तुओं में ये शोभा के रूप में विद्यमान है। विश्व में दृष्टिगोचर होने वाला सौन्दर्य, ऐश्वर्य और दिव्यता, इनके ही कारण है। पापी लोग जो अपकर्म करते हैं लड़ाई, झगड़ा, मारपीट, घृणा, द्वेष, पारस्परिक विरोध और निन्दा आदि में जो प्रवृत्त होते हैं, वह सब इनकी माया का प्रभाव है।

माता महालक्ष्मी अत्यन्त दयामयी और कृपामयी हैं। उन्हें अपने भक्त अत्यन्त प्रिय हैं, इसलिए वे माता के समान उनका पालन करने के साथ-साथ उनकी अभिलाषाएं पूर्ण करती हैं। जो लोग माता महालक्ष्मी की पूजा और ध्यान करते हैं, उनकी शरण में रहते हैं, उनपर कृपा करने के लिए वे सदा व्याकुल रहती हैं।[1]

गुफा में दूसरी पिण्डी माता महाकाली की है। महाकाली महाशक्ति का प्रधान अंश है। शुम्भ और निशुंभ के साथ होने वाले महासमर के समय में ये भगवती दुर्गा के ललाट से प्रकट

---

1. ध्यान महालक्ष्मी । —दुर्गा सप्तशती : अध्याय 2

हुई थीं। इन्हें भगवती दुर्गा का आधा अंश माना जाता है। गुण और तेज में ये दुर्गा के समान हो है। इनका अत्यन्त शक्तिशाली शरीर करोड़ों सूर्यों के समान तेजस्वी है। सम्पूर्ण शक्तियों में ये प्रमुख है और इनसे बढ़कर कोई शक्तिशाली है ही नहीं। ये परम योग स्वरूपिणी सम्पूर्ण सिद्धि प्रदान करने वाली है। श्रीहरि की ये अनन्य भक्ता हैं। तेज, पराक्रम और गुण में ये श्रीहरि के तुल्य हैं। इनके शरीर का रंग काला है और ये इतनी शक्तिमान् हैं कि यदि ये चाहें तो एक ही सांस में सारे विश्व को नष्ट कर सकती हैं। अपने मनोरंजन के लिए अथवा जनता को शिक्षा देने के विचार से ही ये संग्राम में असुरों के साथ युद्ध करती हैं। जो भी मनुष्य महाकाली भगवती की पूजा करता है उसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष तथा अन्य सांसारिक सम्पत्तियां प्राप्त होती हैं। ब्रह्मादि देवता, मुनिगण और मानव सब इनकी उपासना करते हैं।

ये देवी, नील-कमल की भाति श्याम हैं। चार हाथ, गले में मुण्डमाला और चोला व्याघ्र के चर्म का है। इनके दात लम्बे, जिह्वा चंचल, आँखें लाल, कान चौड़े तथा मुख खुला हुआ है। भद्रकाली, श्मशान काली, गुह्य काली और रक्षा-काली आदि नामों से इनके अनेक रूप हैं। इनका एक अन्य प्रसिद्ध, नाम चामुण्डा है। इन्होंने असुरों के साथ होने वाले युद्ध में चण्ड-मुण्ड नामक दो महाअसुरों का संहार किया था, अतः इनको चामुण्डा भी कहा जाने लगा।

माता महाकाली संहार की देवी है। अधर्मी दुष्टों का संहार करके अपने भक्तों को अभय प्रदान करना उनका मुख्य कर्म है। अपने भक्तों के विघ्न, रोग, शोक, दुःख, भय आदि को दूर करती हैं।

माता महाकाली महातेजस्वी है उनकी मूर्ति साक्षात् वीरता साहस, ऐश्वर्य, रूप, तेज और अलौकिक शक्ति की प्रतीक है। उनके दस हाथों में खड़ग, चक्र, गदा, बाण, धनुष, त्रिशूल, भुशुण्डि, सिर तथा शंख हैं। उनके तीन नेत्र हैं सारे अंग आभूषणों से सुशोभित हैं और उनकी कान्ति नीलमणि के समान है। वे सदा अपने भक्तों की संकटों से रक्षा करके, भोग और मोक्ष प्रदान करने वाली हैं मधु-कैटभ द्वारा संकट ग्रस्त होने पर इन्होंने ब्रह्मा और विष्णु को भयमुक्त किया था। इनकी कृपा से मानव निर्भय हो जाता है। युद्ध में उसे कोई पराजित नहीं कर सकता। अकाल मृत्यु नहीं होती। व्याधियां आक्रमण नहीं करतीं। ग्रह, भूत-प्रेत, पिशाच आदि नहीं सता सकते। जो मानव भक्ति भावना से माता महाकाली की उपासना करता है उसके शत्रुओं का नाश होता है तथा उसे सौभाग्य और परम मोक्ष की प्राप्ति होती है।[1]

गुफा में तीसरी पिण्डी महासरस्वती की है। महाशक्ति के तीसरे प्रमुख रूपका नाम महासरस्वती है। परब्रह्म परमात्मा से सम्बन्ध रखने वाली, वाणी की अधिष्ठात्री, कवियों की इष्टदेवी, शुद्ध सत्त्वस्वरूपा और शान्तरूपिणी हैं। वाणी, विद्या, बुद्धि और ज्ञान को प्रदान करने वाली यही देवी है।[2] अत: वाणी में श्रेष्ठता, विद्याओं और कलाओं में निपुणता बुद्धि में विलक्षणता और ज्ञान में विद्वत्ता के लिए इनकी कृपा आवश्यक है।

मां सरस्वती का शरीर अत्यन्त गौर वर्ण का है। वे अत्यन्त सुन्दर और तेजस्वी हैं। इनका शरीर तेज की आभा से इतना

---

1. ध्यान महाकाली 'दुर्गा सप्तशती अध्याय' 9
2. सर्वविद्या स्वरूपा या सा च देवी सरस्वती।
   ब्रह्मवैवर्तपुराण : प्रकृति खण्ड, 1/30

कान्तिमान रहता है कि करोड़ों चन्द्रमाओं की आभा भी उसके सामने तुच्छ प्रतीत होनी है। इनका मुख चन्द्रमा के समान नेत्र शरद्काल में खिले हुए कमलों के समान और दांत कुन्द-पुष्प की कलियों के समान हैं। ये उज्जवल वस्त्र धारण करती हैं तथा विविध प्रकार के रत्नों से निर्मित अलंकारों से शोभायमान रहती है।

महासरस्वती श्रुतियों, शास्त्रों, सम्पूर्ण विद्याओं की स्वामिनी हैं। संसार को विद्याएं और कलाएं इन्हीं का स्वरूप है। प्रत्येक मानव की बुद्धि, विद्या, कविता करने के शक्ति नाटक-उपन्यास और अन्य प्रकार के साहित्य रचना के लिए प्रतिभा, योग्यता और स्मरण शक्ति इन्हीं की कृपा से प्राप्त होती है। अनेक प्रकार के सिद्धान्त भेदों जौर अर्थों की कल्पनाशक्ति भी देने वाली है। इनकी कृपा से शास्त्र और ज्ञान सम्बन्धी सभी भ्रम और सन्देह मिट जाते हैं, कुछ लोग विद्वान बनकर नये-नये विचारों और नये-नये ग्रंथों की रचना में सफल होते हैं। मानव को स्मरण शक्ति प्रदान करने वाली माता सरस्वती को स्मृति-शक्ति, ज्ञानशक्ति और बुद्धिशक्ति कहा गया है। प्रतिभा और कल्पना शक्ति भी यहो हैं। इन्हीं की दया से ब्रह्मा, शेषनाग, वृहस्पति, वाल्मीकि, व्यास आदि वेद, शास्त्र, स्मृतियां, पुराण, इतिहास, पुराण और काव्य रचना में समर्थ हुए।

सरस्वती देवी के एक हाथ में पुस्तक और दूसरे हाथ में वीणा है जो इनके विद्या और संगीत कला की देवी होने का संकेत देते हैं। सभी प्रकार की विद्याओं, सभी प्रकार के गीत-संगीत, सभी प्रकार के नृत्य और नाटकों में आराधना करने पर ये सफलता प्रदान करती हैं क्योंकि सम्पूर्ण, तप और ताल का हेतु उनका रूप सौन्दर्य है।

ब्रह्मस्वरूपा, ज्योति स्वरूपा, सनातनी और सम्पूर्ण कलाओं की स्वामिनी होने के कारण माता महासरस्वती ब्रह्मा विष्णु, शिव आदि देवताओं तथा ऋषि, मुनि, मनु मानव आदि से सुपूजित हैं। श्रीहरि की प्रिया होने के कारण वे रत्न निर्मित माला फेरती हुई श्रीहरि के नाम का जप करती रहती हैं। इनकी मूर्ति तपोमयी है। तपस्या करने वाले अपने भक्त को ये तत्काल फल प्रदान करती हैं। सिद्धि विद्या स्वरूपिणी होने के कारण वे सिद्धि देने वाली हैं। इनकी कृपा से मूर्ख अथवा अल्पमति भी बुद्धिमान, विद्वान् और सुकवि हो जाते हैं।[1]

ऊपर हमने शक्ति के जिन तीन प्रमुख रूपों का वर्णन किया है वे वास्तव में माता वैष्णो के भिन्न-भिन्न नाम हैं। जैसे ब्रह्मा, विष्णु और शिव एक ही ब्रह्म के भिन्न-भिन स्वरूप हैं और तीन संज्ञाओं से भिन्न-भिन्न काम करते हैं उसी प्रकार शक्ति एक होते हुए भी कार्यसिद्धि के लिए भिन्न-भिन्न नाम और रुप धारण करती हैं।[2]

□

1. ध्यान महासरस्वती —'दुर्गासप्तशती, अध्याय' 5।
2. (क) एकैव तु महामाया कार्यार्थं भिन्नता गतां।

—कालिका पुराण : 58/51

यात्रा-कथा

माता वैष्णो देवी जी की गुफा पर सृष्टि के दूसरे कल्प से यात्रा की परम्परा रही है। महाभारत के युद्ध से पूर्व आम जनता के साथ-साथ बड़े-बड़े संत-महात्माओं, ऋषि-मुनियों और राजा महाराजाओं के लिए भी यह एक उत्तम तीर्थ और आदर्श तपोभूमि था यात्रा क्रम धुंधला पड़ने के पीछे उत्तरभारत की तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियां थीं। जिस प्रकार ईस्वी सन् 1947 में भारत विभाजन के परिणाम में इस तीर्थ पर आने वाले यात्रियों की संख्या में बहुत कमी हो गई थी, ऐसा ही कुछ उस काल में भी हुआ।

मासा वैष्णो की पवित्र गुफा में सप्तर्षियों, पाण्डवों और प्रह्लाद के खंभे के प्रतीक चिह्न इस बात के स्पष्ट प्रमाण हैं कि पूर्वकाल में साधारण जनता के साथ-साथ देश के महत्वपूर्ण और विशिष्ट व्यक्ति भी इस तीर्थ पर यात्रा और तप करने के लिए आते थे। जहां तक सप्तर्षियों का सम्बन्ध है उनका बार-बार इस तीर्थ पर आना प्रमाणित होता है। जम्मू नगर के पूर्व में देविका नदी के तटवर्ती पुरमण्डल नामक तीर्थ पर सप्तर्षियों की यात्रा के प्रसंग पुराण साहित्य में मिलते हैं अपनी दो यात्राओं के समय उनकी मुलाक़ात एक डाकू से हुई जो बाद में उनके उपदेश से देविका नदी के तट पर भगवान राम के नाम का जप करके बाल्मीकि जैसा ऋषि बना और रामायण जैसे महाकाव्य की रचना की।[1] इस क्षेत्र की अपनी प्रत्येक यात्रा के समय सप्तर्षि माता वैष्णो देवी जी के दर्शनों

---

1. स्कन्द पुराण : प्रयास खण्ड

के लिए भी आते रहे और इसी क्रम में इस तीर्थ पर अपनी यात्राओं की स्मृति को अमर करने के उद्देश्य से उन्होंने गुफा के भीतर चट्टान पर सात पिण्डियां बना दीं।

डोगरा भूमि में दानवराज प्रह्लाद की यात्राएं विशेष प्रसिद्ध हैं। उनके प्रभाव से जम्मू, मानसर, सरूंहीसर, उत्तर-वाहिनी, घगवाल, रामनगर, कौग, दरलांग, दलसर, दरोट आदि स्थानों पर भगवान नृसिंह जी के मन्दिरों का निर्माण हुआ। अपनी शुद्र महादेव जी की यात्रा के समय वे विनिसंग गोकर्ण से होते हुए कामेश्वरमहादेव जी के दर्शन करने के लिए ऊधमपुर आए थे।[1] यात्रा क्रम में प्रह्लाद माता वैष्णो देवी जी की यात्रा के लिए भी आते रहे। अपनी यात्राओं की स्मृति को स्थाई बनाने के लिए उन्होंने अपने जीवन चरित्र के साथ सम्बन्धित तत्ता थम्म-को गुफा की चट्टान पर उत्कीर्ण करवा दिया।

पाण्डवों का तो जन्म ही माता वैष्णो देवी जी की पवित्र गुफा के पास इसी पर्वत पर हुआ था और उन्होंने अपने बचपन के अनेक वर्ष अपने माता-पिता के साथ यहीं व्यतीत किए थे। इसी लगाव के कारण जब बाद में राजनैतिक परि-स्थितिवश उन्हें तेरह वर्ष का बनवास भोगना पड़ा तो उन्होंने अपने बनवास का अधिकतम समय डोगरा भूमि मे ही व्यतीत किया था। इसमें एक तो माता वैष्णो की पवित्र गुफा उनके आकर्षण का केन्द्र थी और दूसरो उस काल में जम्मू से लेकर बनहाल तक का सारा प्रदेश पाण्डवों के मामा राजा शल्य के

---

1. वामन पुराण : अ० 81

अधीन था ।[1] इसी कारण से डोगराभूमि में मिलने वाले अनेक खण्डरात पाण्डवों द्वारा स्थान-स्थान पर निर्मित भवनों और मन्दिरों के अवशेष स्वीकार किए जाते हैं। इसके साथ-साथ माता वैष्णो से सम्बन्धित भजनों, गीतों और लोकगीतों में पांचों पाण्डवों को माता वैष्णो की पवित्र गुफा का निर्माण करने वाले अथवा उसे संवारने वाले सेवकों के रूप में स्मरण किया जाता है ।[2] महाराजा पाण्डु, उनकी कुन्ती और माद्री नामक रानियां तथा युधिष्ठर, भीमसेन, अर्जुन, नकुल और सहदेव माता वैष्णो के परम सेवक थे। इसी भक्ति-भावना के कारण महाभारत के युद्ध में विजय प्राप्ति में सहायक होने के लिए अर्जुन ने माता वैष्णो की स्तुति की थी ।[3] संकटग्रस्त हो जाने पर युधिष्ठर द्वारा माता की स्तुति भी इसी रूप में है। लोकगीतों और जनश्रुतियों के अनुसार पांचों पाण्डवों ने माता वैष्णो के भवन को सजाने संवारने में बहुत योगदान दिया था। उनका जन्म इसी क्षेत्र में हुआ था और अपने पिता पाण्डु की मृत्यु पर्यन्त तक वे इसी क्षेत्र में रहे थे ।[4] माता वैष्णो के दरबार में अपने निवास की स्मृति को अमर करने के लिए उन्होंने पवित्र गुफा में पांच-पिण्डियों का निर्माण कर दिया। महाभारत में लिखा है कि "माता वैष्णो के शतशृंख पर्वत पर निवास करते समय धर्मराज के आवाहन से, आश्विन मास के नवरात्रों में पंचमी तिथिको राजा पाण्डु के घरकुन्ती के गर्भ से

---

1. डॉ० एस० एस० चाड़क, राईज एण्ड फाल ऑफ जम्मू किंजड़म पृ० 7
2. ड़ोगरी लोकगीत, भाग, 2
3. महाभारत : भीष्मपर्व
4. महाभारत : आदिपर्व

प्रथम पुत्र उत्पन्न हुआ। इस बालक का नाम ऋषियों ने युधिष्ठर रखा। फिर एक-एक वर्ष के अन्तर से वायुदेव और इन्द्र के आवाहन से भीमसेन और अर्जुन तथा अश्विनी कुमारों के आवाहन से छोटी रानी माद्री को नकुल और सहदेव नामक पुत्र प्राप्त हुए।

शतशृंग पर्वत पर रहने वाले ऋषियों ने पाण्डु को बधाई तथा बालकों को आशीर्वाद प्रदान किए। ऋषि और उनकी पत्नियां पाण्डु के पुत्रों से अत्यन्त स्नेह करती थीं। इस प्रकार पाण्डु ने अत्यन्त प्रसन्नमन से अपने पुत्रों और पत्नियों के साथ इस पर्वत पर अपना समय व्यतीत किया था।[1]

इससे स्पष्ट होता है कि महाभारत काल में भी माता वैष्णो की पवित्र गुफा पर लोग केवल यात्रा के लिए ही नहीं आया करते थे, अपितु माता का यह पवित्र तीर्थ तप करने वालों के लिए एक आदर्श स्थान था। समय और स्थिति के प्रभाववश कभी यात्रियों की संख्या में आशातीत वृद्धि हुई है, और कभी आशातीत कमी, किन्तु यात्रा का क्रम किसी न किसी रूप में चलता रहा है।

सन् 1947 से पूर्व माता वैष्णो की यात्रा शारदीय नवरात्रों से आरम्भ होकर तीन महीने तक होती थी।[2] इन्हीं तीनों महीनों में कटड़ा तथा देवी से सम्बन्धित तीर्थ स्थानों पर रौनक हुआ करती थी। यात्रा के अनेक मार्ग थे। कुछ लोग साम्बा-मानसर के रास्ते पैदल चलकर पैंथल के रास्ते कटड़ा पहुंचते थे, तो कुछ लोग जम्मू से नगरोटा होते हुए देवामाई से होकर आगे बढ़ते। वर्तमान पाकिस्तान के गुजरात और जेहलम

---

1. महाभारत : आदिपर्व

2. शुकदेव शास्त्री, डुग्गर स्तुति : 6/1

क्षेत्र से आने वाले यात्री अखनूर अथवा रियासी के पास नौका द्वारा चन्द्रभागा नदी को पार करके पवित्र गुफा में पहुंचते थे। अमृतसर, लाहौर, स्यालकोट, जालंधर क्षेत्रों के यात्री जम्मू के मार्ग से जाते थे।

जब रेलगाड़ी जम्मू तक आने लगी तब यात्रा में कुछ सुविधा हुई और जम्मू के रास्ते पवित्र गुफा में जाने वाले यात्रियों में वृद्धि होने लगी। जम्मू से आगे की यात्रा पैदल अथवा घोड़ों पर की जाने लगी। सन् 1922 ईस्वी में जब जम्मू-श्रीनगर राजमार्ग बन गया तब यात्री गाड़ियों द्वारा मंथल नामक स्थान पर पहुंचने लगे। जब तक दोमेल से कटड़ा तक की सम्पर्क सड़क का निर्माण नहीं हुआ था तब तक मंथल ही यात्रियों के आने-जाने का मुख्य केन्द्र था। उसके बाद यात्री गाड़ियों द्वारा सीधे कटड़ा पहुंचने लगे।

पैदल यात्रा के दिनों में नगरोटा की माता कौल कण्डोली तथा सरून नामक स्थान पर देवांमाई के मन्दिर भी यात्रा में शामिल थे। अनेक यात्री पवित्र गुफा पर जाते और आते समय इन स्थानों पर विश्राम किया करते थे। रात को ठहरने वाले यात्रियों की संख्या बहुत बड़ी होती थी। डोगरा भूमि में यह लोक परम्परा थी कि माता वैष्वो देवी की यात्रा में क्रम से माता कौल कण्डोली, देवामाई, चरणपादुका,आदिकुमारी, भैरो-घाटी और फिर माता की पवित्र गुफा में दर्शन करने चाहिए।[1] परन्तु जब यात्री बसों द्वारा कटड़ा तक पहुंचने लगे तो यह क्रम

---

1. पहला दर्शन कौल कण्डोली दुआ देवां माई,
   त्रीआ दर्शन चरण पादका चौथा अद्धकुआरी।
   पंजमां दर्शन भैरो यन्ती दा, छेमां आपे आई॥

—डोगरी लोकगीत

धीरे-धीरे टूटता गया। पुराने यात्री तो नगरोटा में बस रुकवा कर माता कौल कण्डोली के दर्शन कर लेते थे, परन्तु देवांमाई का स्थान सड़क के दूर होने के कारण उपेक्षित होता गया। धीरे-धीरे नगरोटा में भी बसें रुकनी बन्द हो गईं, पर एक तो राज-मार्ग पर होने के कारण तथा दूसरा नगरोटा में भारतीय सेना की छावनी होने से यहां के तीर्थ का महत्व बना रहा और सेना के सहयोग से उसमें नए निर्माण भी किए गए।

आज से लगभग 45 वर्ष पूर्व जब जम्मू से कटड़ा तक सीधी बस सेवा आरभ हुई तो इस स्थान का महत्व बढ़ने लगा और धीरे-धीरे वह माता वैष्णो की पैंदल यात्रा का आरम्भिक केन्द्र बन गया। पंजाबी भाषा में कारोबारी कस्बे को कटड़ा कहते हैं। अमृतसर में आज भी नगर के अनेक व्यापारिक केन्द्र-कटड़ा के नाम से जाने जाते हैं। उदाहरण के लिए जैसे कटड़ा जैमलसिंह, कटड़ा महासिंह कटड़ा शेरसिंह। माता वैष्णो देवी जी की यात्रा पर अधिकांश यात्री उसी पंजाब से आते थे जो रावलपिण्डी से लेकर दिल्ली तक विस्तृत था। उस प्रभाव से इस स्थान का नाम भी कटड़ा वैष्णो देवी हो गया।

उस काल में यात्रा केवल तीन महीनों तक ही सीमित थी, अतः कटड़ा के निवासी वर्ष के बाकी महीनों में यात्रियों की प्रतीक्षा में अपने-अपने घरों को लीप-पोतकर साफ-सुथरा बना देते। सभी मकान कच्चे होते थे। अतः वर्ष में एक दो बार उनको सफाई और लिपाई आवश्यक थी। आमतौर पर यात्री लोगों के घरों में ठहरते। जो यात्री हर वर्ष आते वे उसी घर में ठहरते। इस उपक्रम में यात्री भी बंट गए और उन्हें अपने घरों में ठहराने वाले पुरोहित भी। पर इससे यात्रा और भी सुखद हुई। पारस्परिक विश्वास और सद्भावना बढ़ी। अपने-पन की भावना का प्रसार हुआ। यात्रियों के आराम और

प्रत्येक आवश्यकता का पूरा ध्यान उनके पुरोहित रखने लगे। यात्री कटड़ा पहुंचते तो पुरोहित बस अड्डे पर उपस्थित होता। आराम से वे सामान सहित उसके घर पहुंच जाते। बिछाने के लिए चटाईयां, ओढ़ने के लिए कम्बल, भोजन बनाने के लिए बर्तन और दूसरी आवश्यक वस्तुएं सुगमता से उपलब्ध हो जातीं। भोजन के उपरान्त देर रात तक माता रानी का कीर्तन होता। कथा-वार्ता होती। यात्री एक दो दिन कटड़ा में विश्राम करते। फिर बड़े आराम और सुविधा से आगे की यात्रा को जाती।

यात्रा केवल दिन के समय होती। रात के घोर अन्धेरे में पहाड़ी मार्ग तय करना सम्भव न था। मार्ग में स्थान-स्थान पर वैष्णो माता के भजन गाती हुई कुमारी-कन्याओं की टोलियों के मधुर स्वर घाटियों में गुंजायमान रहते। ढोल की ताल पर गाते हुए गारड़ी, प्यासों को आचारी आमले और पानी तथा भूखों को नमकीन चने प्रदान करने वाली छबीलें, और आते जाते यात्रियों द्वारा श्रद्धा और प्रेम से बुलाए जाने वाले माता के जयकारे यात्रा को उल्लासमय बना देते। मार्ग में मन्दगति से आगे बढ़ते हुए, स्थान-स्थान पर पैसे लुटाते हुए, रास्ते में बने छोटे-बड़े तीर्थों के दर्शन करते हुए थकावट से चूर यात्री, जब भवन पर पहुंचते तो माता रानी की पवित्र गुफा के दर्शन करते ही उनके मुख कमल की तरह खिल जाते।

जिस दिन यात्री दरबार में पहुँचते, वह दिन विश्राम का होता। रात में जगराता, कीर्तन और कथा होती। दूसरे दिन प्रातः काल उठकर, नित्यकर्म से मुक्त होकर, चरणगंगा के शीतल और चांदी के समान उजले जल में स्नान करके, स्वच्छ वस्त्र पहनकर माता के दर्शनों के लिए तैयारी की जाती। इन दिनों पवित्र गुफा में बिजली का प्रबन्ध न था। बैटरी अथवा

सरसों के तेल से जलने वाले दिए की रोशनी में गुफा का कठिन मार्ग तय करना पड़ता। दोनों तरफ के यात्री इस कठिन मार्ग में खुशी-खुशी जयकारे लगाते हुए आगे बढ़ते। गुफा का अन्धकार मार्ग की विकटता और चरणगंगा का अत्यन्त शीतल जल उन्हें तनिक भी कष्ट न देता।

माता वैष्णो के पूजास्थान पर सबको अत्यन्त आदर और भक्तिभाव से दर्शन कराए जाते। पिण्डियों का स्वरूप वर्णन होता। इतिहास सुनाया जाता। भेंट स्वीकार करके चरणामृत और प्रसाद दिया जाता। और इस प्रकार देश के सुदूरवर्ती प्रदेशों से आने वाले भक्त जी भर कर माता के दर्शन करने के उपरान्त अपने को सौभाग्यशाली मानकर गुफा से बाहर निकलते।

गुफा से बाहर आकर सबसे पहला काम कन्या पूजन का होता। कन्याओं में स्वैटर, शाल और रंगबिरंगी चुन्नियां बांटी जातीं। साधु-महात्माओं को भोजन कराया जाता। फिर स्वयं भोजन करके वापसी यात्रा की तैयारी की जाती। कटड़ा में आकर संगतों द्वारा बड़े-बड़े यज्ञ किए जाते। हजारों लोगों में पूरी और हलवा माता के प्रसाद के रूप में वितरित किया जाता। यात्री लोग कन्या पूजन, जागरण, भजन-गीत माता की स्तुति, हवन और अनेक प्रकार के द्रव्यों का दान करके माता रानी को प्रसन्न करने का यत्न करते।[1] यात्रियों की इस रौनक से कटड़ा गांव होते हुए भी नगर जैसा लगने लगता।[2]

देश के अलग-अलग प्रान्तों की संगत अलग-अलग समय पर आती। पंजाब की संगत आम तौर पर शारदीय नवरात्रों

1. शुकदेव शास्त्री, : डुग्गर स्तुति: 6/4
2. शुकदेव शास्त्री : डुग्गर स्तुति सर्ग-6

में आती। बंगाल और बम्बई की संगत मार्ग शीर्ष चतुर्दशी के उपरान्त आती। स्थानीय जनता ने उनके नाम भी रख लिए थे—लाहोरी संगत, पशौरी संगत, बम्बैया संगत, बंगाली संगत, अम्बरसरी संगत इत्यादि।[1]

आम तौर पर जो आदमी जिस वस्तु का व्यापारी होता, वह उस वस्तु का ही दान करता। कपड़े के व्यापारी कपड़े की बड़ी-बड़ी गांठे कटड़ा में लाकर कुमारी कन्याओं और गरीबों में बांटते थे। ऊन के व्यापारी स्वैटर, शाल, जुराबें, गुलुबन्द आदि का दान करते। पेशावर की संगत वहाँ से सूखे मेवे अपने साथ लाती। विशेषकर नेजे और सब्ज सौंगी। कुमारी कन्याओं में इन बालप्रिय मेवों का वितरण होता।

उन दिनों यात्रियों को सन्त नाम से पुकारा जाता था। सन्त एक महान् आदर सूचक उपाधि है। माता वैष्णो के यात्रियों को यह उपाधि जनता प्रदान करती थी। कई सन्तों ने कटड़ा से लेकर माता के भवन तक के कठिन मार्ग में छबीलें स्थापित करवाई थीं जहां से यात्रा के तीन महीनों तक यात्रियों को नियमित रूप से चने और शीतल जल से सेवा की जाती। दिल्ली वालों की छबील, लाहोर वालों की छबील, आदि कितनी ही ऐसी छबीलें थीं जहां पर चनों के साथ-साथ आचारी आमले भी दिये जाते। इसका कारण यह था कि उन दिनों केवल सीढ़ियों वाला रास्ता था। बिल्कुल सीधी चढ़ाई। हाथी मत्थे जैसी। दरबार के मार्ग पर आगे बढ़ते यात्री जब पसीना-पसीना हो जाते, एक-एक कदम आगे बढ़ाना असम्भव लगने लगता, प्यास से गला सूखने को होता, तभी कोई न कोई

1. लहौरी संग पशौरी संग, औन्दा संग थारा-थारा

छबील आ जाती । तड़के हुए चने, आचारी आमले और निर्मल शीतल जल मिलता तो सारी थकावट मिट जाती ।

इस रूप में यात्रा का यह क्रम बरसों तक चलता रहा । फिर अकस्मात् देश का विभाजन हो गया । सन् 1947 ई० में देश दो टुकड़ों में बंट गया । पाकिस्तान ने जम्मू कश्मीर को प्राप्त करने के लिए आतंक का वातावरण बनाया । आक्रमण भी किया । देश विभाजन का सबसे अधिक प्रभाव पंजाब पर पड़ा । लाखों की संख्या में लोग तबाही के कगार पर पहुँच गए । पंजाब से ही अधिकतम लोग माता की यात्रा पर आया करते थे । वे सब इस परिवर्तन से भयानक रूप से प्रभावित हुए । पाकिस्तान से उजड़ कर जो लोग भारत में आए उनका भविष्य अन्धकारमय था । देश के दूसरे प्रदेश भी हिल गए । पंजाब के शरणार्थी रोजो-रोटी की तलाश में देश के दूसरे प्रदेशों में भी पहुंचे । और इस प्रकार शरणार्थियों को अपने पैरों पर खड़े होने में बरसों लग गए । इस अन्तराल में यात्रा की गति मन्द हो गई ।

समय अपनी गति से आगे बढ़ता रहा । विभाजन के कारण पंजाब के लोग देश भर में फैल चुके थे । परिश्रम और लगन के कारण उनकी आर्थिक स्थिति सुधर रही थी । परिवार और व्यापार में स्थिरता आते ही वे पुनः यात्रा पर आने लगे । उनके सम्पर्क और स्थिति से प्रभावित होकर दूसरे प्रदेशों के लोग भी अब अधिक संख्या में यात्रा करने लगे । यात्रा में फिर गति आने लगी । अब तीन महीने के स्थान पर यात्रा वार्षिक हो गई । प्रत्येक ऋतु में यात्रा होने लगी । धीरे-धीरे यात्रियों की संख्या में विस्तार होता गया और वह हजारों से बढ़कर लाखों तक जा पहुंची ।

इसके बाद यात्रा में और अधिक विस्तार हुआ तो फिर

दिन-रात यात्रा का क्रम आरम्भ हुआ। आधुनिक जीवन में व्यस्तता की अधिकता हो जाने के कारण कई लोग एक ही दिन में यात्रा समाप्त करने का कार्यक्रम बनाने लगे। दिन व दिन यात्रियों की भीड़ बढ़ने लगी। यात्रियों को माता के दर्शनों के लिए कई-कई दिन प्रतीक्षा करने को विवश होना पड़ता। पवित्र गुफा में जाने और आने का एक ही मार्ग था अत: उसमें ताजो हवा और आक्सीजन का अभाव भी एक विकट समस्या का रूप ले रही थी। अत: अक्तूबर 1976 ईस्वी में गुफा में एक नए निगर्मन द्वार के निर्माण कार्य का आरम्भ हुआ, जिसका उद्घाटन डॉ० कर्णसिंह जी ने 20 मार्च 1977 को किया। नैशनल प्राजैक्टस कनर्स्ट्रक्शन कारपोरेशन लिमिटिड द्वारा बनाए गए गुफा के इस द्वार की लम्बाई 38-500 मीटर, चौड़ाई 1.830 मीटर तथा ऊंचाई 2.215 मीटर है। इसके बनने से चौबीस घण्टे में (2200) बाईस सौ यात्रियों के स्थान पर (5600) यात्री बड़ी आसानी से माता के दर्शन करने लगे।

यात्रियों की संखया तीव्र गति से बढ़ रही थी इसलिए अब दिन-रात यात्रा होने लगी। आधुनिक जीवन की व्यस्तता का प्रभाव भी उस पर पड़ने लगा। अधिकांश यात्री विश्राम, आराम, कीर्तन, यज्ञ, होम, कन्या पूजन को कम महत्व देने लगे। वे कम-से-कम समय में यात्रा समाप्त करने की सोचने लगे। दूसरी ओर पण्डों के व्यवहार में भी परिवर्तन आने लगा। लम्बी यात्रा और लम्बी प्रतीक्षा के उपरान्त जब यात्री पवित्र गुफा में माता के दरबार में पहुंचता तो उसे क्षणों में ही बाहर धकेल दिया जाता। प्राचीन काल की यात्रा के दिनों में प्राप्त होने वाले माता के खुले दर्शन तथा पुजारियों का सहानुभूति स्नेह और सम्मान से पूर्ण व्यवहार केवल स्मृति

मात्र बनकर रह गये थे। इस प्रकार यात्रा में लगातार विकास तो हो रहा था, पर अत्यन्त भीड़ के कारण यात्रियों को अनेक परेशानियों का सामना भी करना पड़ रहा था। अनेक कष्ट उठाने पड़ते पर माता के प्रति श्रद्धा के सामने इन कष्टों का कोई मूल्य और महत्व नहीं था क्योंकि माता वैष्णो के लाखों भक्त इस बात के साक्षी थे कि उन्होंने माता के दरबार में उपस्थित होकर श्रद्धा और विश्वास से जो भी मांगा उन्हें मिला।

परम्परा से यह विश्वास किया जाता है कि माता वैष्णो ऐश्वर्य, पराक्रम, आरोग्य और ज्ञान प्रदान करने के साथ-साथ अपने भक्तों के बाहरी और भीतरी शत्रुओं का नाश कर उन्हें विपत्तियों से बचाती है। इस मनोवैज्ञानिक प्रभाव से तीर्थ पर आने वाले यात्रियों की संख्या में आशातीत वृद्धि हो रही थी। 1986 ई० तक यह 16 लाख वार्षिक तक जा पहुंची थी। पर इसके साथ-साथ माता के तीर्थ से सम्बन्धित पण्डों और बारीदारों का दान में प्राप्त धन के प्रभाव से अध: पतन होने लगा। धन के लोभ में कर्त्तव्यविमुख होकर वे धर्म विरुद्ध आचरण करने लगे। ये पण्डे और बारीदार कौन थे ? उनके सीमाहीन लोभ और धर्म विरुद्ध आचरण का जो परिणाम हुआ, इसका संक्षिप्त विवरण आगे दिया जा रहा है।

□

पण्डे, बारीदार और धर्मार्थ ट्रस्ट : ऐतिहासिक परिचय

30 अगस्त सन् 1986 को जम्मू-कश्मीर के महामहिम राज्यपाल श्री जगमोहन जी ने एक विशेष अध्यादेश के द्वारा माता वैष्णो देवी तीर्थ से जिन लोगों के अधिकारों को समाप्त किया था उनमें पण्डे, बारीदार और धर्मार्थ ट्रस्ट-प्रमुख हैं। समनोत्रा जाति के लोग पण्डे और बारीदार दोनों हैं, जबकि राजपूत जातियों से सम्बन्धित कुछ लोग केवल बारीदारों की श्रेणी में आते हैं।

समनोत्रा जाति के ब्राह्मणों का पूर्वज अम्बल नाम का था, जो कई शताब्दी पूर्व उत्तर प्रदेश के प्रसिद्ध नगर आगरा से आकर जम्मू की तहसील रणवीरसिंह पुरा में आबाद हुआ था। जिस स्थान पर उसने निवास का निश्चय किया, उसका नाम उसने अपने पूर्वस्थान की स्मृति में आगराचक्क रखा।

अम्बल का काला नाम का एक पुत्र आगराचक्क से आकर वर्तमान कटड़ा से कुछ ऊपर जंगल में रहने लगा। इस जगह का नाम पहले हंसा था जो बाद में हंसाली हो गया।[1] हंसाली में समनोत्रा वंश की परम्परा स्थापित करने वाले पंडित काला माता वैष्णोदेवी जी की यात्रा के सिलसिले में इस तरफ आए थे। शक्ति के उपासक होने के कारण उन्होंने पवित्र गुफा की अनेक बार यात्रा की थी। एक बार ऐसी ही यात्रा के समय उन्होंने माता वैष्णो जी के आदि कुमारी तीर्थ के समीप रहकर

---

1. कौमबार शजरानसब, संवत् 1964

भगवती की आराधना करने का निर्णय किया। इस उद्देश्य से उन्होंने हंसाली में एक कुटिया बना ली और उसी में रहने लगे।

"यह जगह उस वक्त जंगल वीरान थी। चूंकि अम्बल का पिसर काला बड़ा पण्डित था और किसी को तकलीफ नहीं पहुंचाता था बल्कि अगर कोई मजलूम इस जगह आ जाता तो वह उसको रक्षा करता था। उस वक्त से यह मशहूर होती रही है। कुछ अर्सा बाद उसने एक ब्राह्मण के घर शादी की और उसकी औलाद ने हस्व-तौफीक खुद व इजाजत हुक्काम वक्त रकबा आबाद किया। उसकी औलाद ठाठू के चार पिसर, दरिया, पराग, गोविन्द, गणेश हुए। दरिया, नलेआ, पराग हंसाली, गोविन्द कड़माल और गणेश ने मौजा सरून में रिहायश अखत्यार की और जमीन आबाद की।[1]

राजपूत जाति के सम्बन्ध में कहा जाता है कि भगवान् राम के कुश नामक पुत्र के सबसे बड़े पुत्र का नाम अतिथि था, जो कुश के बाद उनके राज्य का शासक हुआ। उसके बाद इस वंश में निषद, नल, नभ, पुण्डरीक, क्षेमधन्वा, देवानीक, अहीनक, पारियात्रक, देवल, बच्चक, उत्क, बज्रनाभ, शंख, युषिताश्व, विश्वसह, हिरण्यनाभ, पुष्प, ध्रुवसन्धि और सुदर्शन नामक राजा हुए। सुदर्शन के दो पुत्र हुए—अग्निवर्ण और अग्निगिर।[2]

अग्निवर्ण राजा बना। वह स्वभाव से बड़ा तेज और क्रोधी

---

1. कौमातार शजरानसब 1964
2. (क) भागवत पुराण : स्कन्द, 9 अध्याय, 12
   (ख) विष्णु पुराण : अंश 4, अध्याय, 4
   (ग) दीवान कृपाराम, गुलाबनामा : पृ० 5

था। उसके व्यवहार से खिन्न होकर उसका भाई अग्निगिर और कुछ निकट सम्बन्धी अयोध्या छोड़कर अजमेर में चले आए। कुछ समय तक वहां के प्रसिद्ध तीर्थ पुष्कर में रहकर वे नगरकोट—कांगडा के रास्ते शिवालिक पर्वतमाला में आकर रहने लगे। अग्निगिर अपने समूह तथा दूसरे लोगों पर शासन करने लगे। इसी वंशपरा में आगे चलकर अग्निगर्भ नामक राजा हुए जिनके पुत्र जम्बूलोचन ने वर्तमान जम्मू नगर की स्थापना की।[1] इस प्रकार सदियों पूर्व ये राजपूत इस प्रदेश में आकर स्थायी रूप से रहने लगे और धीरे-धीरे इनके वंश का विस्तार होता गया। माता वैष्णो देवी जी के बारीदारों में इन राजपूतों की तीन उपजातियां शामिल थीं—ठाकुर द्रोड़ा, ठाकुर खास और ठाकुर मनोत्रा।

माता वैष्णो देवी जी की पवित्र गुफा के इर्द-गिर्द के क्षेत्र में जो गांव हैं, उन सब में इन्हीं चारों जातियों का निवास है। पवित्र गुफा की उत्तर दिशा के सुखाल, गाटा, देवीगढ़, टोट और सैरी नाम के गांव में खास जाति के ठाकुर, पश्चिमी ढलान पर बसे कोटली भागा गांव में मनोत्रा ठाकुर, पूर्वी ढलान में पुराना द्रोड़, चम्बा, भंगथ, कण्डारियां आदि गांवों में द्रोड़े ठाकुर तथा नले, सरून, पैंथल, हन्साली आदि में समनोत्रा ब्राह्मणों का निवास है। पर्वत की दक्षिणी ढलान के पांगल, सेरी, भरथल, हट्ट, भंगथ, बटान आदि गांवों में द्रोड़े ठाकुर और ब्राह्मणों की बस्तियां हैं। गत कई शताब्दियों से ये लोग माता वैष्णो देवी जी के तीर्थ की पूजा और उसकी सुरक्षा से सम्बन्धित रहे हैं।

महाभारत के युद्ध से पूर्व माता वैष्णो देवी जी के तीर्थ

---

1. डॉ० बी० के० शास्त्री, बागे-बाहु : पृ० 15

पर भारतवर्ष के विभिन्न क्षेत्रों से लोग उसी प्रकार यात्रा पर आया करते थे जिस प्रकार आज आ रहे हैं। जैसे आजकल देश के राष्ट्रपति, प्रधानमन्त्री, राज्यपाल और प्रदेशों के मुख्य-मन्त्री आदि माता के दर्शनों के लिए आ रहे हैं, इसी प्रकार की स्थिति उस काल में थी। सप्तर्षि,[1] दानवों के राजा प्रह्लाद[2], हस्तिनापुर के राजा पाण्डु और उनकी कुन्ती और माद्री नामक महारानियां, युधिष्ठर, भीमसेन, अर्जुन. नकुल सहदेव आदि का इस तीर्थ पर आना—इतिहास और पुराण साहित्य में वर्णित है।[3] पाण्डवों का तो जन्म ही माता के तीर्थ पर हुआ था।[4] इससे प्रमाणित होता है कि माता वैष्णो का यह पवित्र तीर्थ आज से हजारों साल पहले भी बहुत लोक-प्रिय था। परन्तु इस काल के आगे जम्मू प्रदेश का इतिहास उपलब्ध नहीं है। कश्मीर में तो कल्हण, जोनराज, श्रीवर एवं शुक ने राजतरंगिणी नामक ग्रन्थों के माध्यम से महाभारत से लेकर सन् 1540 तक का इतिहास प्रस्तुत किया है पर जम्मू-प्रदेश के सम्बन्ध में ऐसी कोई रचना उपलब्ध नहीं। ग्यारहवीं शताब्दी में कश्मीर में रचित तंत्र ग्रन्थों में माता वैष्णो देवी जी की प्रासंगिक चर्चा मिलती है। आठ-मातृकाओं के वर्णन प्रसंग में कहा गया है कि कश्मीर से दक्षिण दिशा में पर्वत की गुफा में परमेश्वर की तपस्या करने वाली माता, वैष्णवी नाम से विख्यात हैं।[5]

1. स्कन्द पुराण : प्रभास खण्ड
2. वामन पुराण : अध्याय 81
3. महाभारत : आदिपर्व
4. डा0 बी0 के0 शास्त्री, माता वैष्णो—इतिहास और कथा : पृ० 72
5. स्निग्धनीलोत्पल निभा हार कुण्डल मण्डिता।
   दक्षिणस्यां दिशि तु सा उपास्ते परमेश्वरम्।
   वैष्णवीति च विख्याता·····॥ स्वछन्द तन्त्र 10/1020

यद्यपि आधुनिक इतिहास के ग्रन्थों में इस तीर्थ के प्रसंगात्मक वर्णन उस रूप में प्राप्त नहीं होते जिस रूप में माता ज्वालामुखी, और माता कांगड़ा के उपलब्ध होते हैं, पर इसमें दोष इतिहासकारों का है, स्थान का नहीं। माता ज्वालामुखी और माता कांगड़ा के सम्बन्ध में छठी शताब्दी से लेकर ऐतिहासिक ग्रन्थों में वर्णन मिलने लगते हैं। चीनी यात्री ह्यूनसांग[1], महमूद गजनी[2], योगिराज गोरखनाथ[3], फिरोज शाह तुगलक[4], अकबर[5], जहाँगीर[6], महाराजा रणजीतसिंह[7], महाराजा खड़गसिंह[8] आदि के इतिहासकारों ने इन दोनों तीर्थों का विस्तार से वर्णन किया है। मुगल और ब्रिटिश शासन के दिनों में योरोप से आने वाले यात्रियों, मूरक्राफट[9], वैरल चार्लस हूगल[10], विलियम फिन्च, वोगल, जी.टी. विने[11] आदि ने भी इन तीर्थों की विस्तार से चर्चा की है।

पर जहां तक माता वैष्णो के तीर्थ का सम्बन्ध है इसके

1. नगेन्द्रनाथ वसु, हिन्दी विश्वकोश
2. अल उलूबी, तारीखे यामिनी : पृ० 35
3. चन्द्रनाथ योगी, योगि संप्रदायाविष्कृति : अध्याय 98
4. इलियटस हिस्ट्री ऑफ इण्डिया : भाग 3, पृ० 318
5. मुहम्मद अकबर, पंजाब अण्डर दी मुगलज : पृ० 158
6. जहांगीरज मैमोरीज : भाग 2, पृ० 224—226
7. विक्रमाजीत हसरत, लाईफ एण्ड टाईम ऑफ रणजीत सिंह : पृ० 201
8. फौजासिंह, महाराजा खड़गसिंह : पृ० 125
9. मूरक्राफ्ट, ट्रैवल्स इन हिन्दुस्तान : पृ० 64-73
10. वैरन चार्लस हूगल' ट्रैवल्स इन कश्मीर एण्ड पंजाब : पृ० 45
11. जी० टी० विने, ट्रैवल्स इन कश्मीर, लद्दाख : पृ० 133-135

बारे में संस्कृत के प्राचीन और नवीन ग्रन्थों एवं स्थानीय लोक-गीतों में माता के नाम की प्रासंगिक चर्चा तो अवश्य मिलती है किन्तु लिखित रूप में वर्णन ग्यारहवीं शताब्दी तथा उसके बाद डोगरा राजाओं द्वारा माता के पुजारियों को दिए पटों और अन्य दस्तावेजों में उपलब्ध होते हैं। सम्भावना की जा सकती है कि महाभारत के युद्ध में जो भयानक नर संहार हुआ था, उसके कारण आने वाले कई वर्षों तक इस क्षेत्र की साँस्कृतिक गतिविधियों में बहुत कमी आ गई। यात्रा ने स्थानीय रूप ले लिया। ऐसी स्थिति लम्बे समय तक रही। फिर विदेशियों के भारत पर आक्रमण होने लगे। उस काल में यह इलाका भयानक वनों और घाटियों से घिरा हुआ था। भारत को लूटने के लिए गजनी का सुलतान महमूद और तुर्किस्तान का तैमूरलेम[1] जम्मू के पास हो गुजरे थे, पर इस तीर्थ की ओर उनका ध्मान नहो गया। वैसे भी विदेशी आक्रमणकारी पंजाब और दिल्ली के मैंदानी इलाकों में हो अधिकतर लूटपाट और कत्लो गारत करते रहे।

980 ई० के आसपास काबुल पर मुसलमानों का अधिकार हो गया। वहाँ के हिन्दू शासकों ने परिवार और अपनी अपार सम्पत्ति के साथ कांगड़ा में शरण की। सुबुक्तगीन की मृत्यु के उपरान्त 997 ई० में गजनी के राजसिंहासन पर आसीन होने के बाद महमूद ने लाहौर के पास महाराजा आनन्दपाल के के नेतृत्व में लड़ने वाली विशाल हिन्दू सेना को पराजित कर दिया। इस काल से लेकर भारत, विशेषकर पंजाब में विदेशी शासन के कारण जो कत्लोगारत, लूटपाट और अत्या-

1. इलियटस हिस्ट्री ऑफ इण्डिया : भाग, 3,
पृ० 467-472

चार होते रहे[1] उसने धार्मिक यात्राओं को बहुत प्रभावित किया। माता वैष्णोदेवी की यात्रा पर अधिकतम यात्री पंजाब से ही आया करते थे। पंजाब की अशान्त एवं आतंक पूर्ण परिस्थितियों के कारण यात्रा में अभूतपूर्व कमी आ गई। पर स्थानीय रूप से यात्रा होती रही और पवित्र गुफा के इर्द-गिर्द के इलाके में आबाद ब्राह्मण और राजपूत पूजा और सुरक्षा की जिम्मेदारी निभाते रहे। तत्कालीन डोगरा राजाओं ने इस सम्बन्ध में उन्हें पटे लिखकर भी दिए। ईसा की सोलहवीं शताब्दी से डोगरा राजाओं और अन्य विशिष्ट व्यक्तियों द्वारा इस तीर्थ की, की गई यात्राओं के प्रसंग इतिहास ग्रन्थों में मिलने लगते हैं। बाहुराज्य के शासक राजा कृपालदेव "1660-1680" ने माता वैष्णोदेवी के तीर्थ की यात्रा के समय जब रास्ते की बुरी दशा देखी तो उसने सारे रास्ते पर पत्थर लगवाकर उसे पक्का करवा दिया था।[2]

राजा गजेसिंह "1688-1703" के राजत्वकाल में सिख पन्थ के दशम गुरु श्री गोविन्दसिंह जो पुरमण्डल और माता वैष्णोदेवी की यात्रा पर आए थे।[3] अठारहवीं शताब्दी में महाराजा रणजीतदेव A.D : 1735-1783" आपत्काल आने पर माता वैष्णोदेवी जी के तीर्थ पर रहने लगे थे। ईस्वी सन् 1783 में जम्मू नगर के वैभव और ऐश्वर्य से आकर्षित होकर रणजीतसिंह के पिता सरदार महासिंह ने जब जम्मू पर आक्रमण किया था तो राजा व्रजराजदेव सुरक्षा के लिए तीर्थ क्षेत्र

1. एस० एम० लतीफ, हिस्ट्री आफ दी पंजाब : पृ० 339
2. डा० एस. एस. चाड़क, ए शार्ट हिस्ट्री आफ जम्मूराज : पृ० 88
3. गणेशदास, राजदर्शिनी : **S. P. M. Fol 190 B**
4. कृपाराम, गुलाबनामा : अंग्रेजी अनुवाद पृ० 27

में चला गया था।[1] राजा व्रजराजदेव को अपने सौतेले भाई दलेल सिंह से द्वेष था। उसने उसकी हत्या के लिए अपने पिता राजा रणजीतदेव के भतीजे मियां मोटा को ड़न्साल की जागीर दी और इसके बदले में दलेलसिंह की हत्या करने को कहा। इसका कारण यह था कि राजा रणजीतदेव के समय दलेलसिंह ने व्रजराजदेव की हत्या का षडयंत्र रचा था। एक दिन जब राजा दलेलसिंह अपने पुत्रों भगवानसिंह और जीतसिंह के साथ माता वैष्णोदेवी जी के दर्शनों के लिए जा रहा था तो दूसरी ओर से मियां मोटा अपने कुछ सहयोगियों के साथ तीर्थयात्रियों के वेश में चल पड़ा मियां मोटा स्वयं स्त्री के वेश में था। कटरा से एक कोस दूर—चरणपादुका-नामक स्थान पर टाकरा हुआ। राजा दलेलसिंह और उसके पुत्र भगवानसिंह ने मुकाबिला किया। पर दोनों मारे गए। भाग्य से उसका छोटा बेटा मियां जीतसिंह बच निकला जो बाद में सन् 1787 में जम्मू का राजा बना।[2]

ऊपर वर्णित प्रसंगों से स्पष्ट होता है कि माता वैष्णोदेवी तीर्थ पर लगातार यात्रा होती रही है और तत्कालीन ड़ोगरा शासक तीर्थ की प्रबन्ध व्यवस्था में रुचि लेते रहे हैं। अगले कुछ वर्षों में यद्यपि यात्रा की गति कुछ धीमी रही, किन्तु बाहर से आने वाले यात्रियों की संख्या में वृद्धि होने लगी। इसका कारण यह था कि पंजाब केसरी महाराजा रणजीतसिंह उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भिक वर्षों में आक्रमणकारियों को पंजाब से निकालकर अपना शासन स्थापित कर चुके थे।

---

1. गुलाबनामा : पृ०, 47
2. [क] कृपाराम, गुलाबनामा पृ०, 45
   [ख] फारस्टर, ए जरनी फराम बंगाल टू इंगलैण्ड : पृ०, 286

1799 ईस्वी में अफगान शासक शाह जमान की अनुमति से लाहोर पर अधिकार करके उन्होंने उसी से राजा की उपाधि प्राप्त कर ली थी। 1803 में अमृतसर भी उनके अधिकार में आ गया। और इस प्रकार धीरे-धीरे उनका शासन सारे पंजाब पर हो गया। प्रदेश में राजनैतिक स्थिरता के साथ-साथ न्याय और धर्म के अनुसार शासन किया जाने लगा! पंजाब केसरी स्वयं अत्यन्त धार्मिक व्यक्तित्व के स्वामी थे। अत: उन्होंने पंजाब में धमार्थ के कामों के लिए एक विभाग की स्थापना कर दी। धर्म और दान के प्रति उनका विशेष झुकाव था जिसके परि-णाम स्वरूप, अमृतसर के दरबार साहब, माता ज्वालामुखी, माता काँगड़ा, हरिद्वार, काशी और जम्मू क्षेत्र के पुरमण्डल तीर्थ पर उनके द्वारा किए गए धर्म और दान के कर्म आज भी स्मरण किए जाते हैं। दरबार साहब को स्वर्ण मन्दिर का रूप उन्हीं का प्रदान किया हुआ है। माता ज्वालामुखी के छोटे और बड़े भवन के छत पर सोने का सारा काम उन्होंने ही करवाया।[1] सन् 1838 के मार्च महीने में उनके द्वारा की गई पुरमण्डल तीर्थ की यात्रा के सम्बन्ध में उनके इतिहासकार ने लिखा है :—

"मार्च महीने की चौबीस तारीख को दिन के तीसरे पहर महाराजा रणजीतसिंह उमापति महादेव जी के दर्शनों के लिए आए। देविका के जल में सदा शिव का अभिषेक किया और पांच सौ रुपये की अरदास की। पच्चीस मार्च को पाँच हजार रुपये नगद, एक हाथी, दो घोड़े, पाँच सोने के कलश, इक्यावन जोड़े कपड़े मन्दिर में चढ़ाए। पाँच-पाँच रुपये प्रत्येक स्थानीय

---

1. विक्रमाजीत हसरत, लाईफ एण्ड टाईम ऑफ रणजीतसिंह : पृ०, 201

ब्राह्मण परिवार तथा गरीबों को दिए। इसके बाद महाराजा ने अपनी विशेष सवारी पर बैठकर नगर की दुकानों का निरीक्षण करते समय अनेक बार सोने की मोहरों की वर्षा की।"[1]

गुलाबसिंह ने महाराजा रणजीतसिंह की सेवा में रहते समय इस प्रकार के हजारों प्रसंग देखे थे और उन पर महाराजा के धार्मिक चरित्र का अत्यधिक प्रभाव पड़ा था। जब सन् 1822 को गुलाबसिंह जम्मू के राजा बनाए गए तो उन्होंने भी धर्मार्थ विभाग की स्थापना करदी, जो उनके शासन तन्त्र का महत्वपूर्ण अंग था। आरम्भ में राजपरिवार और मुख्य दरबारियों के साथ ही धर्मार्थ संगठन का सम्बन्ध रहा, परन्तु सन् 1846 में जब राजा गुलाबसिंह जम्मू-कश्मीर के महाराजा बने तो उन्होंने इस संगठन को जम्मू-कश्मीर सरकार का नियमित विभाग बना दिया।

उस काल में जम्मू के इलाके में माता वैंष्णो की गुफा और पुरमण्डल के उमापति महादेव का मन्दिर ही विशेष रूप से प्रसिद्ध थे। प्रदेश में मन्दिरों की संख्या बहुत कम थी। शिक्षा संस्थाएं भी न के बराबर थीं, अतः महाराजा ने अपनी व्यक्तिगत सम्पत्ति से पांच लाख रुपये देकर रघुनाथ निधि नामक कोश की स्थापना कर दी। इसमें युवराज रणवीरसिंह तथा राज परिवार के अन्य परिजनों द्वारा दिए गए दान भी शामिल किए गए। इस कोश की राशि से प्राप्त होने वाले सूद से नये मन्दिरों और धर्मशालाओं का निर्माण, विभिन्न तीर्थों पर सदाव्रतों का आरम्भ, पुराने मन्दिरों की मरम्मत, संस्कृत पाठशालाओं की स्थापना और प्रबन्ध तथा इसी प्रकार के अन्य

1. सोहनलाल सूरी, उमदाते-उत-तवारीख : पृ०, 413

धर्म-कार्य करने के आदेश दिए गए। धर्म-सम्बन्धी इन कार्यों की देख-रेख के लिए महाराजा ने युवराज रणबीरसिंह को एक मात्र ट्रस्टी नियुक्त कर दिया।[1]

इसके पूर्व महाराजा गुलाबसिंह पुरमण्डल के उमापति महादेव मन्दिर के प्राँगण में विशाल शिवपुरी का निर्माण करवा चुके थे।[2] फिर वे माता वैष्णो देवी के तीर्थ पर गए। 65 तोले सोने की माता महालक्ष्मो की मूर्ति समर्पित की।[3] माता की कृपा के लिए कृतज्ञता प्रकट की। यात्रियों को यात्रा संबंधी सुविधाएँ प्रदान करने के लिए मार्ग में सुधार और भवन तथा आदि कुमारी तीर्थों पर बनी धर्मशालाओं एवं अन्य भवनों की मरम्मत के आदेश दिए। पवित्र गुफा में पूजा, उसकी सुरक्षा तथा वहाँ की प्रबन्ध व्यवस्था को बेहतर बनाने तथा यात्रियों को आवश्यक सुविधाएं प्रदान करने के उद्देश्य से उन्होंने तीर्थ के इर्द-गिर्द रहने वाले राजपूतों और पवित्र गुफा में पूजा करने वाले काला पंडित के वंशजों को तीर्थ क्षेत्र के मन्दिरों में होने वालो चढ़तल को आपस में बाँट लेने की आज्ञा दी।

इसके साथ-साथ उन्होंने यह व्यवस्था भी कर दी कि राजपूतों को पुजारी ब्राह्मणों के साथ मिलकर गुफा और बाहर के भवन क्षेत्र की सफाई रखनी होगी। पुजारी के साथ पूजा का सामान गुफा के भीतर ले जाना होगा। माता के दरबार में यात्रियों को वितरित किए जाने वाले प्रसाद का प्रबन्ध भी उनके ही जिम्मे होगा। राजपरिवार के किसी भी

---

1. दी धर्मार्थ ट्रस्ट जम्मू व कश्मीर, ए ब्रीफ इन्ट्रोडक्शन : पृ०, 3
2. डॉ० बी० के० शास्त्री, देविका तट की संस्कृति : पृ०, 65
3. डॉ० बी० के० शास्त्री, माता वैष्णो—इतिहास और कथा : पृ०, 7

सदस्य द्वारा पवित्र गुफा को, को जाने वाली यात्रा का सारा प्रबन्ध उन्हें ही करना होगा। यदि कोई यात्री, कटड़ा से पवित्र गुफा तक यात्रा करते समय बीमार हो जाए तो उसकी दवादारू भी उनको ही करवानी पड़ेगी। इसके अतिरिक्त यह आदेश भी दिया गया कि इन लोगों को हर साल सरकारी खजाने में ग्यारह सौ पचास रुपये जमा करवाने होंगे। इस रुपये से जम्मू-कश्मीर के महाराजा की ओर से तीर्थ पर आने वाले साधु-महात्माओं और निर्धन यात्रियों के जलपान और भोजन का प्रबन्ध किया जाएगा।[1]

सन् 1846 में तीर्थ पर लागू की गई यह व्यवस्था कुछ वर्षों तक उचित ढंग से चलती रही। महाराजा गुलाबसिंह व राजकुमार रणवीरसिंह तीर्थ की प्रबन्ध व्यवस्था में व्यक्तिगत रुचि लेते रहे। कालक्रम से तीर्थ यात्रियों की संख्या में जब वृद्धि हुई तो चढ़तल भी अधिक होने लगी। पवित्र गुफा के अतिरिक्त आदिकुमारी तीर्थ पर भी काफी चढ़तल होने लगी। इस स्थिति में ब्राह्मण और राजपूत हिसाब में गड़बड़ करने लगे। जब इस प्रकार की शिकायतें राजकुमार रणवीरसिंह के पास पहुँची तो उन्होंने चढ़ावे के बंटवारे के लिए अपने पिता श्री से अनुरोध किया। इस पर ईस्वी सन् 1851 में महाराजा गुलाबसिंह ने जो कानून बनाया उसमें स्पष्ट रूप से इन लोगों के हिस्से नियत कर दिए गए। इस कानून के अनुसार :—

"आदि कुमारी व वैष्णो देवी के मन्दिरों में जो भी चढ़तल होगी उसमें से राजपूतों को 75 प्रतिशत व ब्राह्मणों को 25 प्रतिशत हिस्सा दिया जाएगा। इसमें दरोरा जाति के राजपूतों को दो हिस्से, मनोत्रा व खास को एक-एक हिस्सा व समनोत्रा

---

1. वाजिब-उल-अर्ज

ब्राह्मणों का एक हिस्सा होगा। अर्थात् आदिकुमारी मन्दिर व माता वैष्णो की पवित्र गुफा में होने वाली चढ़तल के चार भागीदार बनाए गए :—

ठाकुर द्रोड़ा, ठाकुर खास, ठाकुर मनोत्रा और समनोत्रा ब्राह्मण। इस कानून में यह भी लिखा गया कि "यह हिस्से-वंशानुगत आधार पर बांटे जाएंगे। इनके बदले में कोई सेवा नहीं ली जाएगी। सिर्फ़ देवी की बखशीश के रूप में ही उसे माना जाएगा। अब से इक्कीस सौ रुपये सरकारी खजाने में जमा करवाएं जाएंगे। हर बारीदार अपने प्रतिनिधि को मन्दिर में चढ़तल इकट्ठा करने के लिए रख सकेगा। पुजारियों को वेतन हम से मिलेगा।[1]"



1. वाजिब-उल-अर्ज

वैष्णोदेवी तीर्थ बोर्ड : स्थापना की पृष्ठभूमि

सन् 1851 ई० से लेकर सन् 1986 ई० तक माता वैष्णो के तीर्थक्षेत्र की व्यवस्था के लिए वही कानून लागू रहा। परन्तु तब सेलेकर आज तक यात्रा और देश के इतिहास में व्यापक परिवर्तन हुए हैं। राज्यसत्ता, माता की गुफा, यात्रियों की संख्या, पण्डों और बारीदारों की मनोवृत्ति, यात्रा का समय, यात्रा मार्ग और प्रबन्ध व्यवस्था आदि सब कुछ बदल गया है।

सन् 1947 में माता वैष्णो देवी के यात्रियों की संख्या पच्चीस हजार वार्षिक हो चुकी थी। महाराजा गुलाब सिंह "1822—1856", महाराजा रणवीर सिंह "1856—1885", महाराजा प्रतापसिंह "1885—1925" और महाराजा हरिसिंह "1925—1951" अपने-2 राजत्व काल में तीर्थ की प्रबन्ध व्यवस्था में विशेष रूचि लेते रहे। इस काल में पूर्ण शास्त्र मर्यादा के साथ तीर्थक्षेत्र में पूजा इत्यादि की व्यवस्था लागू रही तथा किसी भी प्रकार के भौतिक एवं चारित्रिक भ्रष्टाचार का अभाव रहा। पण्डे और पुजारी विद्वान् और कर्म-काण्ड के ज्ञाता थे तथा महाराजा के भय से कोई भी यात्रियों के साथ अशिष्ट व्यवहार करने का साहस तक न कर सकता था। परन्तु भारत विभाजन का प्रभाव यात्रा पर भी हुआ और यात्रियों की संख्या बहुत कम हो गई। दूसरी ओर प्रदेश में माता भगवती को अपनी कुलदेवी मानने वाले ड़ोगरा राजवंश का शासन भी समाप्तहो गया। राज्य की सारी सम्पत्ति और सत्ता नई सरकार के पास चली गई। पर महाराजा हरिसिंह सन् 1935 में धर्मार्थ ट्रस्ट को राज्य सम्पति से अलग

करचुके थे। महाराजा हरिसिंह का यह एक दूरदर्शिता पूर्ण कदम था जिसके करण ट्रस्ट की धार्मिक सम्पत्ति परोक्ष रूप से राज-वंश के पास रह गई। पंजाब में विभाजन के कारण जो विनाश लीला हुई थी उससे यात्रा की गति कुछ वर्ष मन्द रहने के बाद सन् 1955 के मध्य से फिर तेज हुई। सन् 1955 से यात्रियों की संख्या में विस्तार होने लगा जो अगले बीस वर्षों में बढ़कर लाखों तक जा पहुँची। सन् 1976 में यह संख्या छ: लाख हो गई थी। इस समय तक यात्रियों को कटड़ा में ही कई-2 दिन तक रुकने की नौवत आ गई थी। गुफा का एक ही प्रवेश और निर्गमन द्वार होने के कारण अधिक संख्या में यात्री माता के दर्शन नहीं कर पाते थे। अतः मार्च 1977 में गुफा का नया निर्गमन द्वारा वारीदारों ने चार लाख रुपये खर्च करके बनवाया पर सन 1978—79 में यात्रियों की संख्या नौ लाख वार्षिक पहुँच गई। 1979 ईस्वी के जून महीने में कटड़ा में ही बारह हजार से अधिक यात्री अपनी-2 बारी के इन्तजार में कई दिनों तक रुके रहे। 1984-85 में तेरह लाख, 1986 में पन्द्रह लाख यात्री माता के दर्शनों को आए।

यात्रियों की विपुल संख्या से तीर्थ की आय में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। परन्तु जिन यात्रियों से इतना अधिक धन प्राप्त हो रहा था उनकी यात्रा सम्बन्धी सुविधाओं की ओर उतना ध्यान नहीं दिया जा रहा था। कटड़ा का सारा अस्तित्व और व्यापार जिन यात्रियों के कारण है, जो कटड़ा से भवन तक लाखों रुपये खर्च करते हैं उन्हें आवश्यक सुविधाओं से भी वंचित रखा जा रहा था। किन्तु माता वैष्णो देवी जी के प्रति असीम श्रद्धा के कारण यात्री इस ओर ध्यान नहीं देते थे। बारीदार करोड़ों रुपये के चढ़ावे में से केवल दस प्रतिशत धर्मशाला आदि पर खर्च कर रहे थे। यात्रियों की संख्या में

लगातार वृद्धि होने के कारण धर्मार्थ ट्रस्ट द्वारा किए गए प्रबन्धों से भी पूरी नहीं पड़ रही थी। धर्मार्थ ट्रस्ट के रिकार्ड के अनुसार सन् 1986 तक उसने यात्रा मार्ग की मुरम्मत और उसमें प्रकाश व्यवस्था करने के अतिरिक्त आदि कुमारी, सांझीछत और भवन क्षेत्र में यात्रियों को निम्नलिखित आवास सुविधाएँ प्रदान की थी :—[1]

स्थान	आवास	फलश शौचालय	कम्बल	दरियाँ
आदिकुमार	2000	32	2000	200
साँझीछत	300	5	200	50
भवन	5000	175	1500	2000

इसके अतिरिक्त जम्मू और कटड़ा में भी ट्रस्ट की धर्मशालाओं में यात्रियों को आवास की सुविधा प्राप्त थी, परन्तु लाखों यात्रियों से करोड़ों रुपये प्राप्त करने वाले पण्डे और बारीदार अपने कर्तव्य का पालन नहीं कर रहे थे। तीर्थ क्षेत्र में आवास और बिस्तरों की कमी, कटड़ा से भवन तक का टूटा-फूटा और खच्चरों की लीद से भरा मार्ग, तेरह किलोमीटर लम्बे मार्ग में शौचालयों का पूर्ण अभाव, भिखारियों की रेंगती कतारें, दूकानदारों की मनमानी लूट, रात में रोशनी की अव्यवस्था और सबसे बढ़कर पण्डों का यात्रियों से रिश्वत लेकर उन्हें बिना बारी के चोर दरवाजे से माता के दर्शन करा लाना आम बात हो गई थी। पवित्र गुफा के अन्दर और बाहर पण्डों का यात्रियों के साथ किया जाने वाला व्यवहार भी उचित न था। यदि पण्डे और पुजारी अपने धर्म को भूल कर धन के पीछे न भागते तो उनके चरित्र का दूसरों पर भी

---

1. मेजर जनरल जी० एस० जमवाल, माता वैष्णोदेवी टेक ओवर, एण्ड देयर आफटर : पृष्ठ, 2

प्रभाव पड़ता। परवे ज्यूं-ज्यूं अमीर होते गए। अधिक-से-अधिक धन प्राप्त करना उनका मकसद होता गया। इस प्रक्रिया में उचित और अनुचित का ज्ञान भी जाता रहा। विद्याध्ययन करना, यज्ञ करना, कर्मकाण्ड के विद्वान् बनना, यात्रियों से अतिथि देवता की तरह व्यवहार करना सब छोड़ दिया।

यद्यपि कानूनी तौर पर पण्डों या बारीदारों का माता को पवित्र गुफा पर कोई अधिकार नहीं था और माता वैष्णोदेवी स्वयं ही गुफा और उसके इर्द-गिर्द फैले एक लाख अड़तालीस हजार, चार सौ सत्रह कनाल और दो मरले रकबा की एक मात्र स्वामिनी थीं[1], फिर भी पता नहीं इस अव्यवस्था को क्यों नहीं रोका गया ?

वर्षों पूर्व पण्डे ऐसे न थे। वे पढ़े-लिखे, कर्मकाण्ड के विद्वान् और परदेश में यात्रियों के प्रतिनिधि थे। पण्डा शब्द का वास्तविक अर्थ है ज्ञानी, बुद्धिमान और कर्मकाण्ड का विद्वान्। प्राचीनकाल में इस तीर्थ स्थान के पण्डे, तीर्थ पर आने वाले यात्रियों का संरक्षण, उनके आवास, भोजन और अन्य सुविधाओं को सुलभ करवाने में तीर्थ यात्रियों के साथ वैसा ही व्यवहार करते थे, जैसा किसी व्यक्ति के साथ अतिथिरूप में किए जाने का शास्त्र में विधान है। बदले में वे दक्षिणा लेते थे। जब तक यात्री यजमान के रूप में पण्डे को दक्षिणा नहीं दे लेते वे अपनी कमाई को सफल न मानते थे। धर्म और कामनाओं की पूर्ति के लिए तीर्थ यात्रा करते समय अर्थ को परमार्थ से जोड़ने का काम दक्षिणा करती है। दक्षिणा फीस या किराया नहीं है। वह यात्री की श्रद्धा का प्रतीक है। यात्री यदि अपनी समर्थ के अनुसार दक्षिणा नहीं देता और पण्डा उसे

1. राजस्व विभाग, जमाबन्दी रिकार्ड, संवत् 1996

अपनी फीस के रूप में देखता है तो दोनों का पतन होता है। आधुनिक यात्री मेहनत के अनुसार दक्षिणा देना चाहता है जबकि पण्डा मधु मक्खी की तरह यात्री से अधिक से अधिक धन प्राप्त करना चाहता है। जबकि मूल भावना यह है कि यात्री को पण्डे के प्रति अत्यन्त श्रद्धा होती है, और पण्डा भी भी अपने ज्ञान और तप के आधार पर यात्री के कष्ट के निवारण का मार्ग बताता है।

गत कुछ वर्षों से इस क्षेत्र में बड़ी गिरावट आई है। पण्डे और यात्री दोनों के चरित्र में परिवर्तन आया है। जिस प्रकार पण्डों में निष्काम सेवा करने की प्रवृत्ति समाप्त हो गई है, वैसे ही यात्रियों के मन में भी पण्डों के प्रति श्रद्धा की भावना नहीं रही !

पूर्वकाल में माता वैष्णोदेवी जी की आध्यात्मिक यात्रा में पण्डे बहुत सहायक होते थे। वे यात्रियों में अतिथि देवता के होने के भाव से उनकी सेवा और सहायता करते थे। अत्यन्त प्रेम भाव से यात्रियों का स्वागत और सत्कार होता। विधि पूर्वक माता के दर्शन करवाए जाते। शास्त्र मर्यादा से हवन, यज्ञ और कन्यापूजन होता और फिर भाव भीनी विदाई।

पर क्रमशः पण्डों ने अपने धर्म का अपना पेशा बना लिया। वे इस धार्मिक कार्य को रोजी-रोटी कमाने का साधन बना बैठे। शास्त्र-ज्ञान और कर्म-काण्ड का त्याग कर दिया। धर्म, ज्ञान, कल्याण की भावना का परित्याग करके वे केवल अर्थ के दास होकर धर्म विरुद्ध आचरण करने लगे। जब विद्वान्, सच्चरित्र और कर्मकाण्डी होने के बिना भी लगातार पैसा आने लगा, तो वे धीरे-धीरे अशिक्षित, संस्कारहीन और अविनीत होते गए। अकर्मण्य होकर यात्रियों से दुर्व्यवहार तक करने लगे।

पर वे इस बात को कभी सहन नहीं करते थे कि कोई उनके चारित्रिक भ्रष्टाचार की बात करे। इस प्रसंग में शास्त्रों का आधार लेकर माता वैष्णोदेवी जी पर लिखी गई एक पुस्तक की चर्चा आवश्यक है। इस शोध पुस्तक को सेक्रेटरी धर्मार्थ ट्रस्ट ने यात्रियों के लिए उपयोगी मानकर उसे सस्ते दामों में यात्रियों तक पहुँचाने के लिए—चीफ एडमिनिस्ट्रेटिव आफीसर श्री वैष्णोदेवी कम्पलैक्स—को पत्र लिखकर अटका काऊन्टर पर उसकी बिक्री करने का आदेश दिया।[1] पुस्तकें अटका काऊन्टर के इन्चार्ज पंडित प्रेमनाथ जी के पास पहुँचा दी गई।

यद्यपि इसी पुस्तक में सर्व प्रथम पण्डों के पूर्वज पं० श्रीधर और उनके वंश की विस्तार से खोजपूर्ण जानकारी दी गई थी, पर इसमें एक स्थान पर पण्डों द्वारा यात्रियों से रिश्वत लेकर बारी से पहले माता के दर्शन करवाने की चर्चा करते हुए लिखा था :—

"पूर्वकाल में दर्शन क्रम से होते थे किन्तु आज दर्शन क्रम के स्थान पर धन के बल पर होने लगे हैं जिसमें शासकों एवं पण्डों का विशेष हाथ रहता है।"[2]

इसे पढ़कर पण्डों ने धमकी दी कि यदि उस पुस्तक को दरबार में बेचने की कोशिश की गई तो उसके गम्भीर परिणाम होंगे। इसके फलस्वरूप पं० प्रेमनाथ एक भी किताब नहीं बेच सके और पूरे एक साल के बाद पुस्तकें लेखक को दे आए।

किसी भी तीर्थ पर इस प्रकार के आचरण से यात्री की

---

1. सेक्रेटरी धर्मार्थ ट्रस्ट, पत्र संख्या 416-18 दिनांक 22-11-1983
2. माता वैष्णो, इतिहास और कथा : पृ०, 49

तीर्थ भावना को चोट पहुँचती है। उसमें अश्रद्धा उत्पन्न होती है और अश्रद्धा से जो विषमता पैदा होती है वह सामाजिक और सांस्कृतिक बुराईयों को जन्म देती है। माता वैष्णोदेवी तीर्थ पर कुछ ऐसा ही हुआ। जिस गति से पण्डों और बारी-दारों के पास पैसा आता गया उससे भी अधिक गति से वे उदण्ड और अविनीत होकर भ्रष्टाचार और दुर्व्यवहार के आदी होते गए। पर यात्रियों के साथ किए जाने वाले दुर्व्यवहार तथा तीर्थक्षेत्र की अव्यवस्था की शिकायत सुनने वाला कोई न था। अत: प्रदेश और देश के प्रमुख समाचारपत्रों में तीर्थ क्षेत्र में पाई जाने वाली अव्यस्था, दुकानदारों की लूट, भौतिक और चारित्रिक गंदगी और सबसे बढ़ कर पन्डों, बारीदारों और पोलीस के आचरण के सम्बन्ध में लेख और पत्र प्रकाशित होने लगे। बम्बई, कलक्त्ता, पंजाब, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश से आने वाले अनेक यात्रियों द्वारा देश के प्रमुख समाचार पत्रों के माध्यम से इस तीर्थ की प्रबन्ध-व्यवस्था में सुधार करने के लिए राज्य सरकार और धर्मार्थ ट्रस्ट से अनुरोध किया जाने लगा। सन् 1980 के बाद यात्रियों में और अधिक जाग-रुकता आई और समाचार पत्र उनकी शिकायतों को प्रमुखता से प्रकाशित करने लगे। इन्हीं दिनों एक प्रमुख उर्दू दैनिक ने लिखा :—

"जैसे ही यात्री लम्बा और थका देने वाला मार्ग तय करके दरबार में पहुँचते हैं, उन्हें पोलीस, दुकानदार और बारीदार परेशान करना शुरू कर देते हैं, पर उन्हें कोई रोकने वाला नहीं। यात्रियों द्वारा अत्यन्त श्रद्धा से अर्पण किए जाने वाले धन की यहां खुली लूट हो रही है। ऐसे पवित्र स्थान पर चारों ओर गंदगी के ढेर देखकर दु.ख होता है। जिस तीर्थ पर देश

के राष्ट्रपति नीलम संजीव रेड्डी प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी और अन्य विशिष्ट व्यक्ति यात्रा करने आएं, उस स्थान की व्यवस्था और वातावरण कष्ट दायक है। आम यात्री की भावना है कि इस तीर्थ पर पाई जाने वाली बुराईयों और तीर्थ यात्रियों से किए जाने वाले दुर्व्यवहार को यदि नहीं रोका गया तो जितनी गति से इस तीर्थ पर आने वाले यात्रियों की संख्या बढ़ी है, उससे भी अधिक गति से यात्रियों की संख्या में कमी भी आ सकती है।[1]"

ऐसी शिकायतें और समाचार समय-समय पर अनेक दैनिक समाचार पत्रों, साप्ताहिक, पाक्षिक और मासिक पत्रों मे छपते रहे, पर किसी के कान में जूं तक न रेंगी। फिर आम यात्री न तो इतना मुखर होता है और न ही उसके पास इतना समय होता हैं कि वह अपना काम-काज छोड़कर समाचार पत्रों अथवा सम्बन्धित अधिकारियों से लिखा पढ़ी करता रहे। वह इस अन्याय और अत्याचार का फ़ैसला मां भगवती पर छोड़कर निश्चिन्त हो जाता है।

समय-समय पर जम्मू के समाचार पत्र भी सरकार और धर्मार्थ ट्रस्ट के अधिकारियों का ध्यान इस समस्या की ओर आकर्षित करते रहे, पर पण्डें और बारीदार अपनी हरकतों से बाज न आए। इस पर जालंधर के एक प्रमुख दैनिक ने लिखा :—

"वैष्णो देवी तीर्थ पर पण्डों द्वारा की जाने वाली लूट और यात्रियों के साथ किया जाने वाला दुर्व्यवहार निन्दनीय है। यह तीर्थ तीव्रगति से भ्रष्टाचार का केन्द्र बनता जा रहा है।

---

1. हिन्द समाचार : अंक, 26, मई 1982

विशेष कर पण्डों ने इस पवित्र तीर्थ को केवल पैसा कमाने का साधन बना रखा है।[1]

इसी क्रम में जम्मू के हरि संदेश, कश्मीर टाईम्ज, एक्स-सैलसियर आदि समाचार पत्रों द्वारा तीर्थ की इस विकट समस्या की ओर प्रदेश सरकार और धर्मार्थ ट्रस्ट को ध्यान देने का लगातार आग्रह किया जाता रहा। तीर्थ पर आने वाले दश के विशिष्ट व्यक्ति भी इस सम्बन्ध में अपना असंतोष व्यक्त करते रहे। हरियाणा के पूर्व मुख्यमंत्री श्री भजनलाल, श्रीअटल बिहारी वाजपेयी, उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्यमन्त्री श्री वीर बहादुर सिंह, केन्द्रीय वित्तमंत्री श्री एस० वी० चवन, जनता पार्टी के अखिल भारतीय अध्यक्ष श्री चन्द्रशेखर, वर्तमान उपराष्ट्रपति श्री शंकर दयाल शर्मा आदि ने भी तीर्थ क्षेत्र की अव्यवस्था और यात्रियों की कठिनाईयों की चर्चा की। सबसे तीखी प्रतिक्रिया श्री शंकरदयाल शर्मा जी की थी। उन्होंने दुकानदारों की लूट, गन्दी वस्तुओं की बिक्री, आवास की असुविधा, और सफाई के पूर्ण अभाव की विशेष शिकायत की। कटड़ा से भवन तक की गई अपूर्ण और दोषपूर्ण प्रकाश व्यवस्था पर भी उन्होंने असंतोष व्यक्त किया।[2]

भारत सरकार के पूर्व रक्षामंत्री एवं वर्तमान वित्तमंत्री श्री एस० वी० चवन सितंबर 1984 में माता वैष्णोदेवी जी के दर्शनों के लिए आए। यद्यपि उन्होंने कटड़ा से साँझीछत तक की यात्रा हेलीकाप्टर से की पर उनके आगे का रास्ता उन्होंने पैदल तय किया। उन्होंने रास्ते में और भवन क्षेत्र में सफाई के पूर्ण अभाव पर असंतोष प्रकट किया। अपने साथ आए

---

1. दैनिक प्रताप : अंक 9. मई 1985
2. प्रैस रिपोर्ट रिकार्ड, दिनाँक 17 सितम्बर 1984

सरकारी और धर्मार्थ ट्रस्ट के कर्मचारियों को अपने असंतोष से अवगत कराते समय वे इस बात पर हैरान थे कि प्रदेश सरकार और धर्मार्थ ट्रस्ट दोनों ही यात्रियों की कठिनाईयों के प्रति उदासीन क्यों हैं ? तीर्थ की आय और उसकी स्थिति देखकर वे कह उठे :

"आखिर ! यात्रियों द्वारा समर्पित इतना धन कहा जाता है ?"[1]

इस प्रकार कई यात्री सीधे और कई समाचार पत्रों के माध्यम से अपना रोष प्रकट करते रहे। इनमें से अनेक पत्र देश और प्रदेश के समाचार पत्रों में भी प्रकाशित हुए। कई वर्षों से लगातार तीर्थ पर आने वाले एक यात्री ने लिखा।

"लगभग चौदह किलो मीटर का कठिन मार्ग तय करने के बाद जब यात्री भवन क्षेत्र में पहुँचता है तो गंदगी से भरे शौचालयों और भ्रष्ट लोगों के दुर्व्यवहार से उसके यात्रा सम्बन्धी पवित्रतम भाव भी समाप्त हो जाते हैं। क्या इस तीर्थ पर भी तिरूपति तीर्थ जैसी प्रबन्ध-व्यवस्था नहीं हो सकती ?[2]

एक दूसरे यात्री ने, यात्रा की अवधी में तीर्थ क्षेत्र में भोगी परेशानियों की चर्चा करने के उपरान्त प्रदेश के राज्यपाल महोदय से अनुरोध किया कि वे माता वैष्णोदेवी के तीर्थ पर जाने वाले यात्रियों को परेशानियों से बचाएं।[3]

सन् 1964 से प्रतिवर्ष माता वैष्णो देवी जी के दर्शनों के लिए आने वाले एक यात्री ने लिखा—

---

1. प्रैस रिपोर्ट रिकार्ड, 17 सितंबर, 1984

2. राकेश धवन, हिन्दुस्तान टाईम्ज : 19 अक्तूबर, 1984

3. जे० आर० गुप्ता, वही

"मैं चार अप्रैल 1985 के दिन माता वैष्णो देवीजी के दर्शनों के लिए गया। मेरे साथ मेरा परिवार और वृद्ध माता पिता भी थे। मैं आपका ध्यान तीर्थ—क्षेत्र का दुःखद स्थिति की ओर दिलाना चाहता हूं। हम सन् 1964 से लगातार इस तीर्थ पर आ रहे हैं, पर मुझे यह कहते हुए दुःख होता है कि पिछले इक्कीस वर्षों से यहाँ पर उचित शौचालय, स्नानागार, पर्याप्त आवास, पोने का साफ पानो और चिकित्सा की सुविधा नहीं के बराबर है।[1]

प्रदेश में इस अव्यवस्था और भ्रष्टाचार का सब से मुखर और प्रामाणिक विरोध कटड़ा के श्री बंसीलाल जी कोहस्तानी कर रहे थे। श्री बंसीलाल व उनकी माता जी प्रदेश की विधान सभा में इस क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करते रहे हैं। साफ-सुथरे, विनम्र और आकर्षक व्यक्तित्व के स्वामी श्री कोहस्तानी जी तीर्थक्षेत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार को समाप्त करने के लिए यत्नशील रहे हैं और समय-समय पर इस सम्बन्ध में जिलाधीश, मण्डलाधीश, और धर्मार्थ ट्रस्ट के अधिकारियों को भी उन्होंने लिखा हैं। अपने एक पत्र में उन्होंने प्रामाणिक तथ्यों के आधार पर बारीदारों द्वारा चढ़तल में हेराफेरी, यात्रियों के साथ दुर्व्यवहार की विस्तृत चर्चा को है। बारीदारों ने अपनी-अपनी बारी बेचने की जो ठेकाप्रणाली शुरू कर रखी थी, उसका भी उन्होंने प्रमाणिक विवरण दिया है। उन्होंने अपने पत्र के० 3045 दिनाँक 10, नवम्बर 1984 को ऊधमपुर के जिलाधीश और ट्रस्ट के सचिव को लिखा…"पण्डे और बारीदार अपनी बारी से पहले यात्रियों को माता के दर्शन कराने के दो-दो सौ रुपये प्रत्येक यात्रो से लेते हैं। पाँच नवम्बर 1984

1. आई. के. निजाहत दिनांक 24.5.1985

के दिन दरबार में केवल चालीस यात्री थे। "(31 अक्तूबर को श्रीमती इन्दिर गाँधी जी की हत्या के कारण)" पर फिर भी पण्डों और बारीदारों का गैंग कुछ यात्रियों से पैसे लेकर उन्हें बिना बारी के दर्शन कराने ले जाने लगा। जब कुछ यात्रियों ने इसका विरोध किया तो पोलीस वाले उन्हें पकड़ कर कन्ट्रोल रूम में ले गए और उनकी पिटाई की।"[1]

ऐसी अमानवीय और निन्दनीय हरकतें पण्डे और बारीदार अपना धर्म भूलकर धन के लोभ में कर रहे थे। और जब धर्म, धन का दास हो जाता है, तब उसका नाश होने लगता है। पर जब-2 धर्म का नाश हुआ है तब-तब भगवान् ने स्वयं अवतार लेकर अथवा किसो को माध्यम बनाकर धर्म की रक्षा और बुरे लोगों का निग्रह किया है।[2] माता वैष्णो देवी जी के तीर्थ पर फैले अधर्म का नाश और धर्म की स्थापना के माध्यम बने प्रदेश के महामहिम राज्यपाल श्री जगमोहन। यात्रियों से प्राप्त होने वाले शिकायत पत्रों तथा समाचार पत्रों के द्वारा उन्हें माता वैष्णो देवी तीर्थ पर व्याप्त भ्रष्टाचार की सूचनाएं मिल रहीं थीं। पर सब कुछ अपनी आँखों से देखने के लिए उन्होंने चुपचाप—गुप्तरूप से इस तीर्थ की यात्राएं कीं। उन्होंने कटड़ा से पवित्र गुफा तक जो कुछ देखा, उसका वर्णन इस प्रकार किया—

"मैं माता वैष्णो देवी जी के विषय में तथा उनके प्रति बहुसंख्यक हिन्दुओं की अत्यंत श्रद्धा और विश्वास के सम्बन्ध

---

1. (क) श्री बंसीलाल कोहस्तानी, एक्ससैलसियर : अंक 21/10/85
   (ख) वही, पत्र संख्या के/3045, 10 नम्वर, 1984
2. (क) गीता 4/3-4 (ख) देवी भागदत : 7/39
   (ग) महाभारत : वनपर्व, 272/71

मैं सुनता और पढ़ता रहा हूं। पर जम्मू-कश्मीर का राज्यपाल नियुक्त होने से पूर्व मुझे इस तीर्थ को देखने का अवसर नहीं मिला था।"

"प्रदेश का राज्यपाल बनने के उपरान्त मैंने इस तीर्थ की चार बार यात्रा की। इसमें दो बार मैं गुप्तरूप से गया। मैंने कटड़ा से पवित्र गुफा तक का सारा मार्ग पैदल तय किया। इन यात्राओं में मेरे साथ मेरे कुछ व्यक्तिगत मित्र थे जिनमें दिल्ली के कुछ प्रसिद्ध डाक्टर, राजस्थान उच्चन्यायालय के दो न्यायाधीश तथा उनके परिवार शामिल थे। इन दोनों अवसरों पर मैं पैदल ही पवित्र गुफा तक गया और पैदल ही कटड़ा तक आया। इन दोनों यात्राओं में, मैं बड़ी बारीकी से सारी व्यवस्था और वातावरण का निरीक्षण करता गया। जबकि मेरे साथी बड़े आराम से यात्रा में मग्न रहे। इन यात्राओं में मेरा अनुभव अपनी ही प्रकार का था। अविस्मरणीय, दुःखद और करुणात्मक।"

"जहाँ मैं मूर्तियों के जगमगाते प्रकाश और भक्तों की अटूट श्रद्धा और विश्वास से अत्यंत प्रभावित हुआ, वहाँ तीर्थ के चारों ओर व्याप्त भौतिक एवं चारित्रिक भ्रष्टाचार से मुझे बड़ा आघात लगा।"

"मार्गवर्ती सब कुछ क्रूर और निर्दयी सा प्रतीत हुआ। मार्ग में स्थान-2 पर असहनीय गंदगी के ढेर थे। अनेक स्थान पेशाब की तीव्र दुर्गन्ध वाले थे। जहाँ तक कि पीने योग्य पानी का एक गिलास भी उपलब्ध नहीं था। ढ़ावों और खाद्य वस्तुएं बेचने वाले स्थानों पर पर्यावरण मतली लाने वाला था। मैं हैरान था कि ऐसे स्थानों पर कुछ खाने-पीने के बाद आदमी बीमारी से कैसे बच सकता है? जो लोग ऐसा करने पर भी बीमार नहीं होते, वे अवश्यमेव अतिमानव होंगे अथवा वे

अमानव होंगे जिनके लिए गंदगी उनके दैनिक जीवन का अंग बन चुकी है। मुझे डाक्टरों ने बताया कि अधिकाँश यात्री, यात्रा करते समय तथा भवन क्षेत्र में आवास के मध्य पेट की बीमारियों में पीड़ित हो जाते हैं।"

"मैंने नोट किया कि इस क्षेत्र में किसी भी स्वास्थ्य नियम का पालन नहीं किया जाता। मुझे बताया गया कि जब एक बार किसी स्वास्थ्य अधिकारी ने इस क्षेत्र में सफाई और खाने-पीने की वस्तुओं की जाँच करने का प्रयास किया तो इसे धर्मार्थ ट्रस्ट के कार्यों में हस्तक्षेप कहा गया। इस सम्बन्ध में किसी को कोई परवाह नहीं। दुकानदार प्रत्येक प्रकार की बीमारी को खाने और पोने वाली वस्तुओं के वेश में बेच रहे हैं।"

"भिखारो और कुष्ठरोगी पर्यावरण को और अधिक गन्दा करके यात्रा को क्षोभकारी और खिन्न करने वाली बना देते हैं। वे यात्रियों से दान को गुहार करते हैं, पर यदि आप उनकी वात नहीं मानते तो उन्हें आक्रमक और अशिष्ट होने में देर नहीं लगती। आरम्भ में आपको दुवाएं देने वाला उनका रूप क्षण में हो कोसने ओर गालो देने वाला भो हो सकता है।"

"भवन निर्माण पर कोई भो नियंत्रण नहीं। नगर पालिका का कोई भो कानून यहां लागू नहीं या उसे लागू नहीं होने दिया गया। सब प्रकार के अस्त-व्यस्त और अक्रमिक निर्माण पवित्र गुफा के इर्द-गिर्द कर दिए गए हैं। कभी यह छोटी सी गुफा अवश्यमेव अत्यंत सुन्दर, धने और हरियाली से आपूर्ण वृक्षों से रक्षित तथा बल खातो नदियों एवं जल कुण्डों से शोभित थी।

आज उसकी सौम्यता और आध्यात्मिकता की उपेक्षा करके उसे भद्दी और भयावह इमारतों में निमग्न कर दिया गया है।"

"इससे भी अधिक दुःखद स्थिति यह है कि इस अव्यवस्था और अस्त-व्यवस्ता की कोई जिम्मदारी नहीं लेता। धर्मार्थ ट्रस्ट, बारोदार और कुछ सीमा तक राज्य सरकार –सब एक दूसरे पर दोषारोपण करते हैं। धर्मार्थ ट्रस्ट का आरोप है कि बारीदार सारा चढ़ावा ले जाते हैं। बारीदारों का कहना है कि धर्मार्थ ट्रस्ट ही तीर्थ क्षेत्र की सारी भूमि और दुकानों आदि का स्वामी है, पर तीर्थं के लिए बहुत थोड़ा खर्च करता है। राज्य सरकार आरम्भिक सुविधाएं तक प्रदान करने में इस कारण रुचि नहीं लेतो, क्योंकि कटड़ा से पवित्र गुफा तक का सारा इलाका ट्रस्ट के स्वामित्व में है। और गैर सरकारी क्षेत्र में आरम्भिक सुविधाएं प्रदान करना राज्य सरकारका दायित्व नहीं, संक्षेप में स्थिति इस प्रकार है--सब और दुर्व्यवस्था और खलबली,आरोप और प्रत्यारोप। और इस प्रक्रिया में बेचारे यात्री कष्ट उठाते हैं।"

"यदि कोई हमारे समाज के पतन को देखना चाहता है तो उसे सिवाए कटड़ा से गुफा तक को पैदल यात्रा के कुछ नहीं करना है। इससे उसे न केवल एक आहत और घायल सभ्यता अपितु एक घातक रोग के शिकार समाज को अनुभूति भी होगो।"

राज्यपाल श्री जगमोहन जी की इस अभिव्यक्ति से स्पष्ट होता है कि वे माता वैष्णादेवी जो के तीर्थ क्षेत्र में व्याप्त भौतिक और चारित्रिक भ्रष्टाचार एवं प्रदूषित पर्यावरण से से बहुत दुःखी हुए परन्तु एक संवैधानिक प्रमुख के रूप में वे सीमाओं से बंधे थे। उनकी शक्ति सीमित थी। इस नाजुक विषय पर डा० फारुख अब्दुल्ला अथवा श्री जी० एम०

शाह भी ऐसा कोई कदम उठाकर हिन्दुओं के विरोध का पात्र नहीं बनना चाहते थे। यद्यपि डा० फारुख अब्दुल्ला नवंम्बर 1982 में तथा मई 1983 में माता वैष्णो के दरबार में गए थे परन्तु राजनैतिक कारणों से वे इस सम्बन्ध में मौन हो रहे।

श्री जगमोहन इस समस्या को सुलझाने की योजना पर विचार-विमर्श करते रहे। उन्होंने धर्मार्थ ट्रस्ट के एकमात्र ट्रस्टी डा० कर्णसिंहजी से इससमस्या पर खुलकर बात की और उनसे आग्रह किया कि वे यात्रियों की समस्याओं की ओर ध्यान दें। तभी प्रदेश के राजनैतिक घटनाक्रम में परिवर्तन हुआ श्री जी० एम० शाह की सरकार को बरखास्त करके प्रदेश में राष्ट्रपति शासन लागू कर दिया गया। इस घोषणा से राज्यपाल के पास सारी संवैधानिक और प्रशासनिक शक्तियाँ आ गईं। इन शक्तियों से राज्यपाल ने शक्ति-तीर्थ पर व्याप्त भ्रष्टाचार को समाप्त करने का मन ही मन निर्णय कर लिया। पर ऐसा ऐतिहासिक और क्रान्तिकारी कदम उठाने से पूर्व उन्होंने इस समस्या के सभी पहलुओं पर गम्भीर विचार-विमर्श किया। और अन्त में परिणाम की चिन्ता माता वैष्णोदेवी जी पर छोड़कर कर्तव्य पालन का दृढ़ निश्चय करके उन्होंने 30, अगस्त 1986 को एक अध्यादेश के द्वारा—माता वैंष्णोदेवी तीर्थ अधि-नियम लागू कर दिया। इस अध्यादेश रूपी शस्त्र के एक ही प्रहार से तीर्थ क्षेत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार रूपी राक्षस का अन्त होकर वहां नए युग का सूत्रपात हुआ।

□

वैष्णोदेवी तीर्थ बोर्ड : स्वरुप और उद्‌देश्य

30, अगस्त ईस्वी सन् 1986 शनिवार के दिन जम्मू-कश्मीर सरकार की ओर से एक असाधारण राजकीय परिपत्र जारी किया गया जिसके अनुसार भारत गणराज्य के सैतीसवें वर्ष में प्रदेश के राज्यपाल ने जम्मू-कश्मीर के संविधान की धारा "92" बानवें के अन्तर्गत एक अध्यादेश की घोषणा की। इस अध्यादेश का नाम है—

'जम्मू-कश्मीर श्रीमाता वैष्णोदेवी तीर्थ अधिनियम 1986"

इस अध्यादेश की आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुए कहा गया कि माता वैष्णोदेवी तीर्थ और उसके सम्बन्धित अन्य स्थानों पर प्रबन्ध और प्रशासन की उच्चकोटि की व्यवस्था करना है। इसमें कटड़ा से लेकर पवित्र गुफा तक का वह सारा क्षेत्र सम्मिलित है जिसकी प्रशासन व्यवस्था पहले जम्मू-कश्मीर धर्मार्थ-ट्रस्ट के अधीन थी। सात मार्च 1986 को भारत सरकार की जिस घोषणा से प्रदेश में राष्ट्रपति शासन स्थापित किया गया था उसके अर्न्तगत प्राप्त अधिकारों का प्रयोग करके राज्यपाल ने यह व्यवस्था की।

इस व्यवस्था के अन्तर्गत कटड़ा से लेकर माता वैष्णोदेवी की पवित्र गुफा तक के पूरे क्षेत्र के भवन, वनभूमि, पर्वत और पूजा स्थान जिनका प्रबन्ध पूर्वकाल में धर्मार्थट्रस्ट के अधीन था, एक बोर्ड के अधीन कर दिये गये हैं। इस बोर्ड के पदेन अध्यक्ष प्रदेश के राज्यपाल रहेंगे। यदि राज्पाल हिन्दू नहीं है तो वे किसी प्रसिद्ध, हिन्दूधर्म के ज्ञाता एवं सदस्यता की योग्यता रखने वाले व्यक्ति को बोर्ड का अध्यक्ष मनोनीत कर

कर सकेंगे। डा० कर्णसिंह बोर्ड के आजीवन उपाध्यक्ष रहेंगे। बोर्ड में इन दोनों के अतिरिक्त नौ सदस्य और होंगे जिन्हें राज्यपाल महोदय मनोनीत करेंगे।

इन सदस्यों में एक सदस्य धमार्थ ट्रस्ट का और एक सदस्य बारीदारों का होगा। दो सदस्य ऐसे होंगे जिन्होंने हिन्दू धर्म और हिन्दू संस्कृति के प्रचार और प्रसार में विशेष योगदान दिया होगा। दो ऐसी महिलाओं को भी सदस्य बनाया जाएगा जिन्होंने हिन्दू धर्म, हिन्दू-संस्कृति और समाज-कल्याण विशेषत: महिलाओं की प्रगति के लिए विशेष भूमिका निभाई होगी। शेष तीन सदस्य ऐसे लोग होंगे जिन्होंने प्रशासन, विधि एवं आर्थिक मामलों में विशेष ख्याति प्राप्त की हो।

सभी सदस्य तीन साल की अवधो के लिए मनोनीत होंगे। यद्यपि बोर्ड की अवधो तोन साल निश्चित को गई है पर बोर्ड के अध्यक्ष, बोर्ड के काम से असंतुष्ट होने को स्थिति में उसे कभी भी तोड़ सकते हैं। उस स्थिति में बोर्ड के सभी अधिकार अध्यक्ष के पास रहेंगे। इन अधिकारों का प्रयोग तीन मास को अवधी तक अथवा नए बोर्ड के गठन तक हो सकेगा।

बोर्ड के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष को छोड़कर अन्य किसी भी सदस्य को उसके काम के असंतुष्ट होने पर हटा सकते हैं। बोर्ड का प्रत्येक सदस्य तीर्थ क्षेत्र की पूंजी के विनाश, अपव्यय अथवा अनुचित खर्च के लिए जिम्मेदार होगा। यदि यह प्रमाणित हो जाता है अमुक नुकसान अमुक सदस्य की स्वेच्छाचारो कार्यवाही अथवा गलती से हुआ है, तो बोर्ड उस नुकसान की पूर्ति के लिए उस सदस्य पर मुकद्दमा दायर करेगा।

बोर्ड की किसी भी मीटिंग में जब तक कम से कम चार सदस्य भाग नहीं लेंगे, उसकी कारवाई वैधानिक नहीं मानी

जाएगी। बोर्ड का अध्यक्ष, बोर्ड के किसी भी कर्मचारी को अनुशासन भंग, लापरवाही, अयोग्यता, कर्तव्य के प्रति कोताही और आपत्तिजनक आचरण का दोषी पाए जाने पर उसे दण्डित करने के अतिरिक्त नौकरी से भी निकाल सकेगा।

बोर्ड का प्रमुख कार्यकारी अधिकारी जिलाधीश से कम पद का तथा आर्थिक अधिकारी उपनिदेशक अकाऊन्ट के पद से कम नहीं होगा। तीर्थक्षेत्र में जितने भी लोग अधिनियम लागू होने से पूर्व धर्मार्थ ट्रस्ट के कर्मचारी थे, वे सब बोर्ड के कर्मचारी माने जाएंगे।

बोर्ड के वैध कर्त्तव्य

1. पवित्र गुफा में पूजा का उचित प्रबन्ध करना।
2. यात्रियों को दर्शन और पूजा की उचित सुविधा प्रदान करना।
3. चड़तल और तीर्थ की अन्य सम्पत्ति की सुरक्षा।
4. यात्रियों को आवास सुविधा प्रदान करने के लिए नए भवनों का निर्माण।
5. शौचालयों और स्नानगृहों का निर्माण।
6. पवित्र गुफा और उसके इर्द गिर्द के क्षेत्र का विकास।
7. यातायात के साधनों का विकास।
8. धार्मिक और सामान्य प्रशिक्षण का प्रबन्ध।
9. यात्रियों एवं अन्य लोगौं के लिए चिकित्सा सुविधाएं।
10. बोर्ड के कर्मचारियों के लिए आवश्यक सुविधाओं का प्रबन्ध।

11. ऐसे सभो प्रकार के प्रयत्न करना जिनसे तीर्थ क्षेत्र के प्रशासन-प्रबन्ध में निपुणता आए, चढ़तल का उचित उपयोग हो तथा यात्रियों को आवश्यक सुविधाएं प्राप्त हो सकें।

अधिनियम लागू होने के साथ ही बारीदारों तथा तीर्थ से सम्बन्धित अन्य लोगों के सभी अधिकार समाप्त हो गए हैं। महामहिम राज्यपाल एक आयोग नियुक्त करेंगे जो बारीदारों को मुआविजा देने के सम्बन्ध में मार्ग दर्शन करेगा। इसो प्रकार बोर्ड धर्मार्थट्रस्ट को भो प्रतिवर्ष अनुदान। ग्रान्ट देने का प्रावधान करेगा। तीर्थक्षेत्र के सभी दुकानदार और पट्टीदार जो पहले ट्रस्ट के किरायेदार थे, बोर्ड के किरायेदार होंगे। बोर्ड के हिसाब-किताब की वार्षिक जांच पड़ताल चार्टड एकाऊन्टेन्ट से करवाई जाएगी तथा बोर्ड तीर्थ के प्रशासन सम्बन्धी मामलों पर हरवर्ष एक रिपोर्ट तैयार करवा कर उसे आम जनता की जानकारी के लिए प्रकाशित किया करेगा।[1]

राज्यपाल श्री जगमोहन जी की इस कारवाई का देश और प्रदेश में अभूतपूर्व स्वागत हुआ। सभ्य और बुद्धिजीवी समाज ने राहत की सांस ली। देश के महत्वपूर्ण व्यक्तियों, सनातन धर्मी संस्थाओं और प्रतिवर्ष माता वैष्णो जी के दर्शनों के लिए आने वाले यात्रियों की ओर से राज्यपाल महोदय को मुबारकबाद के पत्र और तार भेजे गए। इन लोगों में देश के सभी वर्गों के लोग शामिल थे, राजनेता, सैन्य और सिविल अधिकारी, बैंकों और दूसरे प्रतिष्ठानों के अध्यक्ष, धार्मिक और समाज सेवी संस्थाएं तथा सामान्य जनता और यात्री। सबने

---

1. जम्मू व कश्मीर सरकार गजट, श्रीनगर 30, अगस्त, 1986

एक स्वर से राज्यपाल के इस साहसपूर्ण कदम की सराहना दी।

दूसरी ओर धर्मार्थ ट्रस्ट, पण्डों और बारीदारों की ओर से राज्यपाल के इस अध्यादेश को पवित्र तीर्थ पर अपवित्र आक्रमण करार दिया गया। प्रदेश के उच्चन्यायालय में इसके विरुद्ध याचिका दायर की गई। बारीदारों ने "हिन्दू एक्शन कमेटी, कटरा" के नाम से संघर्ष समिति बनाकर इस अध्यादेश का तीव्र विरोध किया। इसे काला कानून कहा। जलसे किए, जलूस निकाले। "वैष्णोदेवी और काला कानून" नाम से एक बारह पृष्ठों का पैम्फलैट छपवाकर जनता और विशिष्ट लोगों में वितरित किया। इसमें राज्यपाल को तानाशाह और हठी कहकर अध्यादेश जारी करने के लिए उनकी आलोचना की गई।[1] इनका कहना था कि सैकड़ों वर्ष पूर्व त्रिकुटा की पहाड़ियों पर बसे जिन ग्रामीणों ने अपार श्रद्धा और आस्था के साथ नियमपूर्वक और विधि से सुबह-शाम माता की पूजा की है[2], और जब कटड़ा में किसी धर्मशाला, सराय या होटल का नाम निशान नहीं था, तब जो लोग माता के यात्रियों को अपने-अपने घरों में निःशुल्क ठहराते और शक्ति के अनुसार उनकी सेवा करते रहे हैं[3] आज उनके साथ अन्याय किया जा रहा है। इन बारीदारों की एक बड़ी संख्या दुर्बल वृद्धों, रोगियों, अनाथ बच्चों और अबलाओं की है, जो अपने भरण-पोषण के लिए माता वैष्णोदेवी से प्राप्त साधन पर निर्भर थे। इस प्रकार अपने आपको निर्दोष बताकर तथा

1. वैष्णोदेवी और काला कानून : पृ० 1
2. वैष्णोदेवी और काला कानून : पृ०, 7
3. वही : पृ०, 8

तोर्थक्षेत्र में यात्रियों की सुविधा के लिए किए गए प्रबन्धों की चर्चा करके अध्यादेश को तुरन्त वापस लेने की बात कही गई।[1] कुछ समाचार पत्रों ने भी राज्यपाल के इस कदम को खतरनाक बताते हुए लिखा—

"इस पवित्र तीर्थ पर सरकारी कब्जा तथा धर्मार्थट्रस्ट जैसी इस महान हिन्दू संस्था को इस तरह क्षतिग्रस्त करके राज्यपाल ने बहुत ही खतरनाक कदम उठाया है। इस राज्य में हिन्दू-समुदाय हमेशा अल्पसंख्या में रहेगा। बहु संख्यक समुदाय की भावी सरकारों द्वारा इस एक्ट का सदैव दुरुपयोग किया जा सकता हे।"[2]

इसमें कोई सन्देह नहीं कि बारीदारों ने कटरा और भवन क्षेत्र में धर्मशालाएं बनवाई थीं पर इन नाम की धर्मशालाओं में ठहरने वाले यात्रियों से वे कितने पैंसे वसूल करते थे, यह बात किसी से छिपी नहीं है। यदि इन धर्मशालाओं का निर्माण यात्रियों द्वारा दिए गए धन से हुआ था तो उन यात्रियों से धर्मशाला में निवास करने का किराया वसूल करना कहाँ की नैतिकता थी ? क्या चढ़तल से प्राप्त होने वाले करोड़ों रूपयों में से कुछ रुपये धर्मशालाओं के प्रबन्ध और व्यवस्था के लिए खर्च नहीं किए जा सकते थे ? क्या इतनी बड़ी आय का कुछ हिस्सा वे मार्ग सुधार, प्रकाश व्यवस्था, शौचालयों और स्नानागारों के निर्माण और यात्रियों की आवास सुविधा के लिए खर्च नहीं कर सकते थे ?

इन्होंने ऐसा नहीं किया था, इसलिए वे हिन्दू संस्थाओं, और यात्रियों की सहानुभूति प्राप्त नहीं कर सके। प्रदेश की

---

1. वैष्णोदेवी और काला कानून : पृ० 12
2. हिन्दुस्तान टाईम्ज : अंक 21-9-1986

जनता ने तो उनका बिल्कुल साथ नहीं दिया। इस सारे परिप्रेक्ष्य में यात्रियों का सर्वाधिक महत्व था जो तीर्थक्षेत्र के कुप्रबन्ध और उपेक्षा के शिकार थे। वे इस परिवर्तन से बेहद प्रसन्न थे। राज्यपाल ने इस अधिनियम के लागू होने के तत्काल बाद तीर्थक्षेत्र में व्यक्तिगत रूचि लेकर कम से कम समय में यात्रियों को अधिक से अधिक आवश्यक सुविधाएं प्रदान करने के लिए एक ऐसा क्रान्तिकारी अभियान चलाया, जिसके परिणाम स्वरूप इस क्षेत्र का तीव्रगति से कायाकल्प होने लगा। विकास के इन चरणों से इस क्षेत्र में जो अभूतपूर्व परिवर्तन आया है उसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है।

□

विकास के चरण

अब कटड़ा से लेकर पवित्र गुफा तक का सारा क्षेत्र पहले जैसा अव्यवस्थित और उपेक्षित नहीं रहा। बसों, टैक्सियों और खच्चरों के खड़े होने के अलग-अलग सुव्यवस्थित स्थान। खुला और पक्का बाजार। पवित्र गुफा की ओर ले जाने वाले टूटे-फूटे रास्ते के नोकीले पत्थर अब गायब हो चुके हैं। उसके स्थान पर अब पक्की, साफ और सुथरी सड़क तैयार हो गई हैं जिसके दोनों तरफ स्थान-स्थान पर रंग-बिरंगे फूलों के पौधे लगाए गए हैं। दो-दो किलोमीटर के अन्तर पर स्थापित शीतल और पीने योग्य पानी के बड़े-बड़े टैंक, अनेक-स्थानों पर नवनिर्मित आधुनिक शौचालय, डाक्टर, डिस्पैन्सरी और दवाई की सुविधा ये सब परिवर्तन की प्रक्रिया के आरम्भ होने के प्रतीक हैं।

भिखारियों ने जिस मार्ग को गंदा और असुविधाजनक बना दिया था, आज वही मार्ग अत्यन्त सुहावना लगने लगा है। शतश्रृंग पर्वत की प्राकृतिक दृश्यावलियों से सुशोभित इस मार्ग पर आगे बढ़ते हुए यात्री जब आदिकुमारी तीर्थ पर पहुँचते हैं तो वहां की साफ सुथरी और परिवर्तित प्रबन्ध व्यवस्था उन्हें प्रभावित करती है। प्रताप भवन के आगे की उस खुली जगह ने जहां पूर्व काल में एक तालाब हुआ करता था, अब सफेद रंग के संगेमरमर से सुशोभित एक विस्तृत प्रांगण का रूप ले लिया है। आदि कुमारी स्थान पर पहुँचते-पहुँचते यात्री को भूख और प्यास लग जाती है। इसे ध्यान में रखते हुए दुकानों पर बिकने वाली प्रत्येक वस्तु के दाम और किसम नियत कर दी गई है। वर्तनों की उपयुक्त सफाई और

प्रयोग में लाए जाने वाले घी, तेल व अन्य सामग्री की समय-समय पर जांच की जाती है।

यात्रा के वातावरण को सुखद बनाने के लिए थोड़ी-2 दूरी पर चौदह "राक गार्डन व पार्क" बनाए गए हैं। आस-पास के रूखे पर्वतों को हरियाली से अपूर्ण करने के लिए अठारह लाख पौधे लगाने की योजना का आरम्भ हो चुका है। रात के समय यात्रा को निरापद रखने के लिये पूरे यात्रा मार्ग को एक सौ नब्बे (190) के करीब सोडियम-लाईटों से प्रकाशित कर दिया है।

अब दरबार के आसपास का वातावरण और प्रबन्ध व्यवस्था परिवर्तित दिखाई देती है। पवित्र गुफा के पार्श्ववर्ती मार्ग तथा उसके दोनों ओर निर्मित भवनों और दुकानों की मरम्मत एवं नए स्नानागारों का निर्माण पूर्ण हो चुका है भवन-क्षेत्र की प्रत्येक इमारत को सफेद रंग करके उसे स्वच्छ और आकर्षक स्वरूप प्रदान किया जा चुका है।

पवित्र गुफा में प्रवेश से पूर्व जिन स्थानों पर यात्रियों को प्रतीक्षा करनी पड़ती है, उन सबको सफेदी, रंग और प्रकाश व्यवस्था से सुशोभित करके उनमें जूट की पट्टियाँ बिछाई गई हैं। माता रानी के दर्शनों के लिए अब पैसे नहीं देने पड़ते। प्रत्येक यात्री को लौह निर्मित उस मार्ग में से होकर गुजरना पड़ता है जिसमें से एक समय में केवल एक ही आदमी गुजर सकता है।

पवित्र गुफा में प्रवेश करते समय यात्री के मस्तक पर जबरदस्ती तिलक लगाकर अब कोई पैसा नहीं ऐंठ सकता। माता के दरबार में शान्ति से दर्शन करके मां को प्रणाम करके, अपने मन की बात कहकर आप शान्ति से बाहर आ सकते

हैं। यात्रियों को धक्के मार कर बाहर निकालने वाले पण्डे अब वहां से विदा हो चुके हैं।

अब चढ़तल का पूरा हिसाब-किताब रखा जाता है। दिन भर चढ़तल की रकम गिनकर एस० डी० एम० के सुपुर्द की जाती है जो उसे बैंक में जमा कर देते हैं। 30 अगस्त 1986 से माता वैष्णोदेवी शराईन बोर्ड के अध्यक्ष राज्यपाल श्री जगमोहन अब तक लगभग चालीस बार पवित्र गुफा की यात्रा कर चुके हैं। उनकी प्रत्येक यात्रा का उद्देश्य व्यक्तिगत रूप से निर्माण कार्यों यात्रियों की सुविधाओं का निरीक्षण एवं दुकानों और होटलों पर बेची जाने वाली वस्तुओं का परीक्षण रहा है। यात्रा में और अधिक सुधार किस प्रकार लाया जा सकता है, इससे सम्बन्धित नए कार्यक्रम तैयार करवाना भी उनका उद्देश्य होता है। उनकी यात्राओं के फल स्वरूप यात्रा मार्ग के तेरह स्थानों पर "वियु पौआईन्टस कम शैलटर युनिटस" बनाए गए हैं। इन स्थानों से एक तो यात्री आसपास के दृश्यों को आराम से देख सकेंगे और दूसरा धूप एवं वर्षा में इनमें शरण भी ली जा सकेगी। अकस्मात् बीमार होने की स्थिति में यात्री इनमें आराम भी कर सकेंगे। इनमें से तीन में कैफे भी खोल दिए गए हैं ताकि आवश्यकता पड़ने पर यात्रियों को अच्छी काफी और चाय उपलब्ध हो सके। पांच और "वियू पौआईन्टस" पर ऐसे ही कैफे खोलने के आदेश दिए गए हैं। इन सभी स्थानों पर यात्रियों को नियत मूल्य पर खाद्य सामग्री तथा गर्म और शीतल पेय उपलब्ध होंगे।

कई वर्ष पूर्व भरों घाटी के नीचे जब नए यात्रा मार्ग का निर्माण किया गया था तब से भैरों मन्दिर की ओर जाने वाला मार्ग उपेक्षित होने के कारण खराब हो गया था। कई

यात्री भैरों मन्दिर की यात्रा भी करना चाहते हैं। इस बात को ध्यान में रखकर श्री जगमोहन जी ने साँझीछत से भैरों-घाटी होते हुए भवन तक जाने वाले मार्ग में सीमेंट की "टाईलज" लगाने का आदेश दिया है। इस मार्ग पर पूरी प्रकाश व्यवस्था करने का निर्णय किया गया ताकि भैरोंघाटी मार्ग से रात के समय यात्रा करने वालों को कोई असुविधा न हो। गत दिनों अपनी एक यात्रा के दौरान अध्यक्ष महोदय ने देखा कि रात के समय तीर्थ मार्ग के कुछ कोनों/मोड़ों पर पूरा प्रकाश नहीं पड़ता। इसके लिए उन्होंने तत्काल अतिरिक्त एक सौ पचास—सोडियम वेपर लैम्पस—लगाने के निर्देश दिए। लकड़ी के खंभों के स्थान पर लोहे के खंभे लगाने का आदेश भो दिया गया। बिजलो की सप्लाई को दिन-रात यकीनी वनाने के उद्देश्य से अतिरिक्त ट्रान्सफारमर लगाने के साथ-साथ पवित्र गुफा के अन्दर बिजली के तारों से यात्रियों को सुरक्षित करने के लिए "फलेम पूफ वाईरिंग" करवाने की आज्ञा भी दी गई।

श्री जगमोहन जी ने मार्च 1988 में की गई यात्रा के दौरान एक महत्वपूर्ण आदेश यह भा दिया कि भवन क्षेत्र में जितनी भी धर्मशालाएं हैं, उन सब में एक-एक ऐसा काउन्टर होगा, जिस पर चौबीस घण्टे एक "केयर टेकर" रहेगा। दिन-रात में, किसी भा समय यह यात्रियों को कम्बल, पत्रिकाएं और दूसरा अपेक्षित सहायता प्रदान करेगा।

यात्रियों को भवन क्षेत्र में और अधिक सुविधाएं प्रदान करने के उद्देश्य से उन्होंने-रेजिडैन्शल कम्पलैक्स-के निर्माण की योजना को अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी है। इन-पिलग्रिमेज काटेजिज-के निर्माण पर एक करोड़ रुपये खर्च

होंगे और इनमें एक ही समय में पाँच सौ यात्रियों को आवास सुविधा उपलब्ध हो सकेगी। इसके अतिरिक्त श्री जगमोहन चाहते हैं कि माता के दरबार और कटड़ा में "इलैक्ट्रिक टैलीफोन एक्सचेन्ज" की स्थापना की जाए ताकि देश के विभिन्न भागों से आने वाले यात्री, यात्रा के दौरान अपने घर वालों से आसानी से सम्पर्क कर सकें। इसके साथ ही उन्होंने तीन हजार नए कम्बल खरीदने के आदेश भी दिए ताकि किसी भी यात्री को इस सम्बन्ध में कोई असुविधा न हो।

इस प्रकार माता वैष्णोदेवी तीर्थ बोर्ड के अध्यक्ष श्री जगमोहन द्वारा पवित्र गुफा की, की जाने वाली प्रत्येक यात्रा तीर्थ के विकास क्रम में एक मील पत्थर की तरह होती है। उनकी इन यात्राओं के परिणाम स्वरूप तीर्थ क्षेत्र में हुए परिवर्तन से प्रभावित एक यात्री ने लिखा है:—

"श्री वैष्णोदेवी मन्दिर में श्री जगमोहन ने तो सचमुच चमत्कार कर दिया है। मेरे जैसे माता के लाखों भक्त श्री जगमोहन के आभारी रहेंगे जिन्होंने इतना महान् काम करके इतने पवित्र और महान तीर्थ स्थान को बचा लिया।[1]"

---

1. अनिल नरेन्द्र, दैनिक वीर अर्जुन : अंक 31 जुलाई, 1987

देवी पिण्डी

शतश्रृंग पर्वत पर ही माता वैष्णो देवी जी की पवित्र गुफा के बिल्कुल पीछे पहाड़ की दूसरी तरफ-देवी-पिण्डो-नाम का तीर्थ है। माता वैष्णोदेवी जो पिण्डियों की यहाँ पर पूजा होती है, इसलिए इसका नामकरण-देवोपिण्डी-हुआ ! शतश्रृंग पर्वत की छोटी-बड़ी चोटियों के मध्य भाग में झज्जर नामक नदी की घाटी में विद्यमान इस तीर्थ का वातावरण अत्यंत शान्त और मनोरम है। यदि इस तीर्थ पर आने-जाने का सरल मार्ग होता तो आज तक माता के लाखों भक्तों ने इसकी यात्रा की होती।

कटड़ा से बारह कि. मीटर पूर्व में पैंथल नामक गांव है। इस गांव से थोड़ी ही दूर कटड़ा से ऊधमपुर जाने वाली सड़क से उत्तर दिशा में छः किलो मीटर की दूरी पर एक मन्दिर में माता वैष्णोदेवी जी की उसी प्रकार की तीन पिण्डिया हैं, जैसी पवित्र गुफा में हैं। पहले इस स्थान पर प्राचोन मन्दिर था। तीर्थ होने के कारण अब उसके स्थान पर नया मन्दिर बनाया गया है। इन तीनों पिण्डियों को माता वैष्णोदेवी जी के तीन रूपों-माता महालक्ष्मी माता महाकाली, और माता महासरस्वती के प्रतीक स्वीकार किया जाता है। पिण्डियों के निम्नभाग से एक निर्मल जल की धारा निकल कर तीव्र गति से प्रवाहित होती हुई कुछ ही अन्तर पर बहने वालो झज्जर नामक नदी में मिल जाती है।

सुकरानी नामक जनपद से उत्तर दिशा में झज्जर नदी की धारा के साथ-साथ एक पहाड़ी तंग मार्ग लगभग छः

कि0 मीटर तक चला गया है। इस मार्ग का अधिकांश भाग बड़ा दुर्गम और कहीं-कहीं भयकारक भी है। जम्मू-कश्मीर सरकार के सिंचाई विभाग ने झज्जर नदी के जल को बांधकर एक-डेढ़ मीटर चौड़ो कूल का रूप दे दिया है। इस कूल का एक किनारा पर्वत की ढ़लान हैं और दूसरा किनारा एक डेढ़ फुट चौड़ी दीवार है। आम लोग इसे ही मार्ग के रूप में इस्तेमाल करते हैं।

सुकरानी से कुन्येआ तक झज्जर नदी की यह कूल एक छोटो नहर के रूप में है जिसके दोनों तरफ शालो, सिऊल, कचालू और मक्की को खेती की जाती है। अमरूद, अनार, बेर और सन्तरों के फलों से लदे हुए वृक्ष इस क्षेत्र में बहुसंख्या में हैं। सुकरानो से यहां तक लगभग एक कि0 मीटर का मार्ग बड़ा सरल और विस्तृत है पर यहां से आगे अकस्मात् सीधी चढ़ाई आरम्भ होती है। पर्वत की ढलान पर बने सीधी चढ़ाई वाले मार्ग के साथ-साथ बड़ी-बड़ी लोहे की पाईपें लगी हैं। देवीपिण्डी तीर्थ से झज्जर के जल की जिस धारा को एक छोटी सी कूल का रूप दिया गया था, इन पाईपों के द्वारा उस जलधारा को समतल भूभाग तक लाकर छोटी नहर में गिराया गया है। इस स्थान पर छोटे-छोटे आम्रकुंज हैं। कुछ देर तक इनकी शीतल छाया में विश्राम करने के उपरान्त यात्री पर्वत पर चढ़ना आरम्भ करते हैं। कुछ दूरी तक जाने के बाद यह मार्ग उत्तराभिमुख हो जाता है।

इस स्थान से आगे का प्राय: सारा ही मार्ग रूखी और पथरीली पर्वत घाटी में से होकर गया है। जल की धारा के साथ-साथ आगे बढ़ने वाला यह मार्ग तंग और भयावह होने के बाद भो जल की शीतल, निर्मल धारा का सहचर होने से बहुत सुहावना लगता है। कुन्येआ गांव से कुछ आगे थोड़ी-

बहुत बस्ती है पर मार्ग का अधिकांश भाग सुनसान ही है।

जब तीर्थ स्थान एक-मील दूर रह जाता है तो मार्ग के उस भाग के आस-पास कोई आबादी दिखाई, नहीं देती। केवल चरवाहे और गड़रिये ही कहीं-कहीं अपने-अपने पशु समूहों के साथ दिखाई देते हैं जो सायंकाल होने पर अपने-अपने घरों को लौट जाते हैं। आगे का क्षेत्र चीड़ के वृक्षों तथा बरैंकड़, कुरी, तिम्बरू, सुआली, गरना और कैम्बल की झाड़ियों से परिपूर्ण है।

थोड़ा सा आगे बढ़ने पर शतश्रृंग पर्वत का वह भाग आ जाता है जिसके दूसरी तरफ माता वैष्णो जी की पवित्र गुफा है। जैसा विशाल वृक्ष गुफा के द्वार पर है वैसा ही एक वृक्ष इस स्थान पर भी है। पूरे पर्वत पर केवल ये दो ही ऐसे वृक्ष हैं। इस वृक्ष के पास तीन पिण्डियां हैं। पूर्वकाल में यहां छोटा सा मन्दिर था। उसके स्थान पर अब नया मन्दिर बनाया गया है। आध्यात्मिक दृष्टि से तीर्थस्थान की स्थिति अनुपम है। नगरीय कोलाहल से दूर, शांत, एकांत और रमणीक जलधाराओं से युक्त यह एक आदर्श तपोभूमि है। इसके तीन तरफ ऊंची-ऊंची पर्वत चोटियां हैं। मध्य में हरियाली से परिपूर्ण और वारिधाराओं से निनादित मनोरम घाटी है। प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण इस मनोरम घाटी में माता वैष्णोदेवी जी का पवित्र पूजा-स्थान है।

लोक परम्परा में यह माना जाता है कि माता वैष्णोदेवी जी इस स्थान पर आकर भी तपस्या करती हैं। कभी वे पवित्र गुफा में तप करती हैं तो कभी प्रकृति के इस रमणीक स्थान पर आकर। तीर्थ स्थान के वर्तमान महन्त श्री तुलसीदास जी के अनुसार यह स्थान भी माता वैष्णोदेवी जी की तपोभूमि है। आश्विन, कार्तिक और मार्गशीष इन तीन महीनों में माता

पवित्र गुफा में तप करती हैं और वर्ष के शेष दिनों में कई बार माता के इस तीर्थ पर आने की उन्हें अनुभूति हुई है। ऐसी अनुभूति उनके पूर्ववर्ती महन्तों को भी होती रही है। तीर्थ-स्थान की महन्त परम्परा में इस बात को दृढ़ता से स्वीकार किया जाता रहा है।

इस सम्बन्ध में इस स्थान से प्रवाहित होने वाली झज्जर नदी की उत्पत्ति के सम्बन्ध में कहा जाता है कि माता वैष्णो-देवी जी ने जब इस क्षेत्र में आकर इस स्थान को अपनी-तपो-भूमि बनाया तो उस समय यहाँ पर जल का बहुत अभाव था। मातारानी एक छोटी कन्या के रूप में इस स्थान से दूर नीचे जाकर अथवा पवित्र गुफा के पास से एक झज्जर/घड़े में जल लाया करती थीं। एक दिन जब माता जल से भरी हुई झज्जर लेकर लौट रहीं थीं तो अकस्मात् इस स्थान पर झज्जर उनके हाथ से गिरकर टूट गई। झज्जर का जल उतराई की ओर एक जलधारा के रूप में बहने लगा, और फिर तब से उसका बहना नहीं रुका। झज्जर से जन्म होने के कारण इसका नाम ही झज्जर हो गया।

तीर्थ स्थान पर माता वैष्णो देवी जी के निराकार स्वरूप की प्रतीक तीन पिण्डियां हैं जिनके पौराणिक नाम माता महालक्ष्मी और महासरस्वती हैं। जिस प्रकार सृष्टि के कार्य का संपादन करने के लिए परमात्मा के ब्रह्मा, विष्णु और शिव तीन रूप हुए उसी प्रकार प्रयोजनवश शक्ति भी तीन प्रधान रूपों में विभक्त हो गईं।[1] ऊपर से भिन्न-भिन्न दिखाई देने पर भी इन तीनों में कोई भेद नहीं। कार्यभेद से नाम और रूप में भेद हैं। एक ही शक्ति के यह तीन अलग-अलग नाम हैं

---

1. वराह पुराण : 96/60

और सामूहिक रूप से उन्हें वैष्णवी कहा जाता है। इस सम्बन्ध में भगवान् श्रीकृष्ण का कथन है:—

"हे देवी ! तुम विश्व को जननी मूल प्रकृति ईश्वरी हो। तुम सृष्टि की उत्पत्ति के समय आदिशक्ति के रूप में विराजमान रहती हो और अपनी इच्छा से सत्व, रज और तम गुणों वाली बन जाती हो।"

यद्यपि वास्तव में तुम निराकार हो, पर अवसर आने पर आवश्यकता के अनुसार साकार हो जाती हो। अपने भक्तों पर कृपा करने के लिए तुम शरीर धारण करती हो। तुम सब प्रकार से मंगल करने वाली तथा सब मंगलों की भी मंगल हो।[1]

कई वर्ष पूर्व इस तीर्थ स्थान के सम्बन्ध में पता चल जानने के उपरान्त भी धर्मार्थट्रस्ट अथवा अन्य किसी स्वयंसेवी संस्था ने इसके विकास में रुचि नहीं दिखाई। इसका मूल कारण इस तीर्थ पर जो थोड़े बहुत विकास के कार्य हुए हैं, उनकी पृष्ठभूमि में उन साधु महात्माओं का योगदान रहा है जो इस तीर्थ के महन्त रहे हैं।

तीर्थ के वर्तमान महन्त श्री तुलसीदास जी हैं। अनेक वर्षों तक कठोर परिश्रम करने के उपरान्त वे इस स्थान पर नया मन्दिर और कुछ कमरे बनवाने में सफल हुए हैं। उनसे पहले इस तीर्थ पर—

1. श्री रामरत्न दास,
2. दण्डी स्वामी,
3. परमहंस,
4. ठाकुरदास,

---

1. ब्रह्मवैवर्त पुराण : प्रकृति खण्ड, 66/7-10

5. मौनगिरि—आदि महात्मा इस तीर्थ की सेवा में रहे हैं। पूर्वकाल में मार्ग के अभाव में बहुत ही कम लोग यहां आते थे। कभी-साधुओं की टोलियां अवश्य माता के दर्शनों के लिए आती और तीर्थ पर कुछ दिन तक रुकतीं। जो महात्मामहन्त के रूप में तीर्थ पर सेवाकार्य करते, वे कई-कई दिनों तक कहीं भी आते-जाते नहीं थे। जब कभी बाहर जाना होता, तो एक दो महीने के राशन-पानी का प्रबन्ध करके लौटते। तपस्या और साधना में मग्न रहते और प्रातः सायं माता वैष्णोदेवी जी की पूजा करके अपने को धन्य मानते। यदि उन साधु महात्माओं में माँ भगवती के प्रति इतनी श्रद्धा और विश्वास न होता तो वे उस सुनसान और भयावह स्थान पर एकान्तवास करने में सफल न होते।

यह क्रम दशाब्दियों तक चला। कई वर्ष पूर्व पैंथल और उसके निकटर्ती क्षेत्र को सिंचाई की सुविधा प्रदान करने के लिए सरकार ने जो योजना बनाई उसके अन्तर्गत देवीपिण्डी तीर्थ क्षेत्र से निकलने वाली चरणगंगा और झज्जर दोनों के जल को एक कूल के द्वारा खेतों तक पहुँचाने का निर्णय हुआ। इस कूल के निर्माण से इस तीर्थ पर आने-जाने का साधन बन गया। और फिर तीर्थ स्थान के महन्तों के प्रभाव और प्रेरणा से पहले दूर-दराज के ग्रामीण अंचल से तथा फिर कटड़ा, ऊधमपुर, पैंथल, मंथल, आदि से कभी-कभी कुछ लोग तीर्थ पर आने लगे।

जब तीर्थ पर थोड़ी बहुत रौनक होने लगी तो फिर नवरात्रों में विशेषकर शारदीय नवरात्रों में दुर्गापाठ, होम और यज्ञ का आयोजन किया जाने लगा। गत कुछ वर्षों से इस अयोजन में भाग लेने वाले भक्तों की संख्या में निरंतर

वृद्धि होती गई है और अब तो जम्मू नगर से भी माता के अनेक भक्त इसमें भाग लेने पहुंचने लगे हैं।

तीर्थ के वर्तमान महन्त श्री तुलसीदास जी के प्रयत्नों से यात्रियों के विश्राम और आवास के लिए कुछ निर्माण किए गए हैं। रात को तीर्थ पर ठहरने वाले यात्रियों को भोजन और आवास की सुविधा उपलब्ध है। अत: कभी-कभी कुछ लोग टोलियों के रूप में यहां पर आने लगे हैं, परन्तु सुगम मार्ग और यातायात के साधनों का अभाव इस तीर्थ के विकास में सबसे बड़ी बाधा बने हुए हैं।



माता कौलकण्डोली

डोगरा भूमि में माता वैष्णोदेवी जी से सम्बन्धित जो लोकगीत मिलते हैं उनमें माता की यात्रा-कथा की चर्चा करने वाला एक गीत बड़ा लोकप्रिय रहा है। पैदल-यात्रा के दिनों में यात्री इस गीत की पंक्तियों को गुनगुनाते हुए आगे बढ़ते थे। इस गीत में माता वैष्णोदेवी यात्रा का जो क्रम रखा गया उसके अनुसार कौलकन्डोली, देवामाई, चरणपादुका, आदिकुमारी, भैरोघाटी से होते हुए माता वैष्णो की पवित्र गुफा में पहुँचना होता था। अतः यात्री को इन सभी स्थानों पर माता वैष्णो के विभिन्ननाम रूपों के दर्शन करते हुए यात्रा करनी चाहिए।[1]

इस लोकगीत की रचना उस काल में हुई थी जब माता वैष्णोदेवी जी की पवित्र गुफा की यात्रा पैदल हुआ करती थी। सन् 1922 में जम्मू-श्रीनगर राज-मार्ग बनकर तैयार हो गया तो फिर यात्री जम्मू से बसों द्वारा यात्रा करने लगे। इसमें कौलकण्डोली और देवांमांई दोनों तीर्थ स्थान उपेक्षित हो गए। जम्मू से लगभग सत्ताईस मील उत्तर में जम्मू से कटड़ा जाने वाली सड़क पर "नमाई" नामक गांव है। इस स्थान से लगभग दो मील पश्चिम में वनभूमि के मध्य में देवामाई का प्राचीन मन्दिर है। पैदल यात्रा के दिनों में इस तीर्थ पर विशेष रौनक रहती थी, पर जव से यात्रा-बसों द्वारा होने लगी, इस

---

1. पहला दर्शन कौल कण्डोली, दुआ देवा माई।
   त्रीआ दर्शन चरणपादुका,चौथा अद्धकुआरी।
   पंजमा दर्शन भैरो यती दा छैमां आपे आई।।

   डोगरी लोक गीत।

तीथ पर यात्रियों का आवागमन समाप्त हो गया है। पर माता कौल कण्डोली के तीर्थ की स्थिति इससे भिन्न है।

जम्मू नगर से पन्द्रह कि० मीटर दूर जम्मू से श्रीनगर जाने वाली सड़क पर नगरोटा नाम का गांव है। लोक परम्परा में विश्वास किया जाता है माता वैष्णोदेवी जो पवित्र गुफा की ओर जाते समय कुछ काल के लिए इस स्थान पर विश्राम किया था। जब माता वैष्णोदेवी इस स्थान पर आई तो उन्होंने वृक्षों के कुंज के पास कुछ कुमारी कन्याओं को खेलते हुए देखा। वे भी एक कन्या के रूप में उनमें शामिल हो गईं और उनके साथ खेलती रहीं। काफी देर तक खेलने के उपरान्त जब कन्याओं को भूख और प्यास लगी तो माता ने ब्रह्मा द्वारा दिए गए कमण्डल से बालप्रिय वस्तुएं प्राप्त कर, कन्याओं को खिलाकर उन्हें संतुष्ट कर दिया। जब उन्होंने प्यास लगने की बात कहीं तो माता ने एक कटोरी एक कन्या को देकर कहा कि वह सामने दिखाई देने वाले गड्ढ़े से उस कटोरी। (कौल) को भर लाए। उस कन्या ने कटोरी से जल को हिलाया और फिर उससे दूसरी कन्याओं को भी पानी पिलाया। डोगरी भाषा में कटोरी को कौल तथा हिलाने को कन्धोलना कहते हैं। माता की कृपा से इस कण्डीक्षेत्र में निर्मल और मीठे जलाशय का उदय हुआ था, अतः इस घटना की बहुत चर्चा हुई। उस जलाशय "बौली', का नाम "कौलकन्डोलो" पड गया और धीरे-धीरे स्थानोय प्रभाव से उसे—कौलकण्डोली के रूप में बोला जाने लगा। उस स्थान पर माता के निवास की स्मृति में उनका मन्दिर बनाया गया और उसमें पूजा की जाने लगी।

यद्यपि माता कौलकन्डोली से सम्बन्धित इस प्रसंग के ऐतिहासिक व धार्मिक साहित्य में प्रमाण नहीं मिलते और न

ही इस घटना पर प्रकाश डालने वाली कोई प्रामाणिक रचना उपलब्ध होती है, परन्तु इतने काल तक लोकमानस में जीवित रहना ही उसकी महत्ता का परिचायक है।

माता कौलकंडोली का यह तीर्थ चैंडुआ नामक नदी के वाम तट पर विद्यमान है। इस नदी को गुप्तगंगा भी कहा जाता है। इसका कारण यह है कि देविका नदी की तरह, थोड़ी सी खुदाई करने पर इसमें जल आ जाता है। माता का मन्दिर मध्यम आकार का है। न बहुत छोटा और न बहुत बड़ा। स्थानीय शिला खण्डों की बड़ी-बड़ी ईंटों से इसकी दीवारों का निर्माण किया गया है। मन्दिर के शिखर पर अथवा उसके इर्द-गिर्द कहीं भी कलश नहीं लगाए गए। मन्दिर के रचना काल के सम्बन्ध में कोई शिलालेख अथवा लिखित प्रमाण उपलब्ध नहीं होता। मन्दिर के पुजारी और स्थानीय जनता के अनुसार यह मन्दिर पाण्डवों ने अपने बनवास काल में बनवाया था। कुछ भी हो, मन्दिर प्राचीन है और इसकी बनावट जम्मू प्रदेश के शुद्ध महादेव जैसे प्राचीन मन्दिर जैसी है जो तीसरे शताब्दी में एक प्रसिद्ध तीर्थ स्थान के रूप में विश्रुत हो चुका था।

मन्दिर का प्रवेशद्वार उत्तराभिमुख है। इसकी चौड़ाई सवा दो फुट और ऊंचाई तकरीबन ढ़ाई फुट है। द्वार के ऊपरी भाग के शिलाखण्ड पर खनन करके कुछ मूर्तियां बनाई गई हैं। आज से लगभग सत्तर वर्ष पूर्व जब मन्दिरों की दीवार के कुछ पत्थर हिलने लगे थे, तो तब इन पर पलस्तर करवा दिया था। इससे खनित मूर्तियां पलस्तर में आ गई थीं। और जब सत्तर वर्ष बाद पुनः मन्दिर द्वार को "चिपस पलस्तर" करने की योजना बनी तो पुराने पलस्तर को सम्बलों और गैन्तियों से हटाया गया। इस कारबाई में शिलाखण्ड पर खनित छोटी-छोटी मूर्तियां खण्डित होकर विकृत हो गईं। अब उनकी पहचान

कठिन है। मन्दिर का गर्भगृह प्रांगण से गहरा है। इसके फर्श तथा दीवारों को मुरम्मत करके नया रूप दिया गया है। मध्यमें माता वैष्णो को मध्यम आकार की स्थूल सी पिण्डी है। यह पिण्डी माता के निराकार रूप को प्रतीक है। इस पिण्डी के अतिरिक्त मन्दिर में माता वैष्णो की मूर्ति नहीं। जिस प्रकार परमात्मा पूर्णब्रह्म होने के कारण पिण्डो और मूर्ति अर्थात् निराकार और साकार रूप में पूजित हैं उसी प्रकार पूर्णब्रह्म की प्रकृति हाने के कारण भगवतो वैष्णो भी पिण्डी और मूर्ति दोनों रूपों में पूजी जाती है।

माता वैष्णो ने कितने समय तक इस स्थान पर निवास किया था, इस सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। लोकमानन में केवल यहो विश्वास किया जाता है कि पवित्र गुफा की ओर जाते समय माता ने कुछ काल तक यहां निवास किया था। अनेक लीलाएं की थीं। भक्तों को सुख, सौभाग्य, आरोग्य और ऐश्वर्य प्रदान किया। उस समय इस क्षेत्र में फुन्सी, फोड़ा, दाद, चम्बल, खारिश और तुतलाना जैसो बीमारियों का प्रकोप था। माता ने भभूति मात्र से अनेक रोगियों को रोगमुक्त कर दिया। तब से लेकर इन बीमारियों के रोगी इस तीर्थ से भभूति लेकर, उसका प्रयोग करके, तथा माता रानी की सुक्खन करके स्वास्थ्य लाभ कर रहे हैं।

माता वैष्णोदेवी जी के दर्शनों के लिए जाने वाले यात्री अब बहुत कम संख्या में यहा पर रुकते हैं। अधिकांश यात्री तो इस तोर्थ के विषय में जानते तक नहीं। पर ऐसा होने पर भी मन्दिर में थोड़ा बहुत रौनक लगी रहती है। मन्दिर के आसपास के क्षेत्र में भारतीय सेना के कार्यालय तथा सैनिक शिविर होने से इस स्थान का कुछ विकास हुआ है। मंगलवार और रविवार के दिन अनेक सैनिक और अन्य लोग माता के

दर्शनों के लिए आते हैं। जम्मू, नगरोटा, जगती तथा आसपास के गाँवों से आने वाले भक्तों की संख्या में भी विस्तार हुआ है। मन्दिर में विशेष उत्सव आश्विन मास के नवरात्रों में होता है।

मन्दिर के प्रागण में एक तरफ भगवान् शिव का मन्दिर है, जिसका निर्माण नगरोटा के एक ब्राह्मण ने करवाया था। यह ब्राह्मण देवता प्रत्येक अमावस्या के दिन जम्मू प्रदेश के प्रसिद्ध तीर्थ पुरमण्डल में भगवान् उमापति महादेवजी की पूजा के लिए जाया करता था। उन दिनों पैदल यात्रा होती थी, अतः जब वह वृद्ध हो गया और इतनी लम्बी यात्रा करना उसके लिए सम्भव न रहा, तो उसने भगवान् शिव को प्रेरणा से इस स्थान पर शिव का मन्दिर बनवाया और जीवन पर्यन्त उनकी पूजा करता रहा।

माता के मन्दिर के दक्षिण भाग में एक और मन्दिर है जिसमें सफेद संगेमरमर की राधाकृष्ण की अत्यंत सुन्दर मूर्तियां स्थापित की गई हैं। मन्दिर के गर्भगृह के मध्य भाग में एक लघु आकार के शिवलिंग की स्थापना की गई है। लगभग अस्सी वर्ष पूर्व मन्दिर के पास ही वासो नाम का एक गुजराती रहता था। उसके लड़के की अकाल मृत्यु हो गई। उसकी स्मृति और उसकी आत्मा की शान्ति के लिए उसने इस मन्दिर का निर्माण करवाया था।

कई वर्ष बाद इस मन्दिर को और अधिक सुन्दर बनाने के उद्देश्य से सेना की एक युनिट ने अपने अधिकार में ले लिया। इससे एक तो मन्दिर को आधुनिक रूप मिला और इसके साथ-साथ एक कीर्तन भवन का भी निर्माण किया गया।

राधा-कृष्ण जी के मन्दिर के पास ही आंगन में एक विशाल और अद्‌भुत शिलाखण्ड पड़ा है जिस पर खनन करके, गनेश,

हनुमान, नृसिंह, गर्भंजून, शेषनाग, सिंह और गज आदि की मूर्तियां बनाई गई हैं। यह शिलाखण्ड रेत में दब चुका था। अब इसे साफ-सुथरा करके, सिन्धूर लगाकर सीमेंट से बनाई गई एक विशाल चौकी पर रखा गया है।

माता के इस तीर्थ पर पूजा आदि का काम जगती गांव के कुछ ब्राह्मण परिवार करते हैं। कहते हैं कई साल पहले जम्मू के किसी राजा ने जग्गो नामक एक ब्राह्मण को माता के मन्दिर में पुजारी के रूप में माता की सेवा करने की आज्ञा दी थी। पुजारी को किसी प्रकार की तंगी न हो, इस उद्देश्य से राजा ने नगरोटा पुल के पास एक विशाल भूभाग उसको दे दिया। कुछ समय बाद जग्गो ब्राह्मण के नाम से इस भूखण्ड का नाम जगती हो गया जो बाद में एक गांव के रूप में विश्रुत हुआ। जग्गो को मृत्यु के उपरान्त भी तीर्थ पर पूजा-सेवा करने का अधिकार इसी वंश में रहा और आज भी इसी वंश के मोतीराम और ठाकुरदास मन्दिर की सेवा में है।

□

जम्मू, कटड़ा और दरबार में यात्रियों के लिए आवास और यातायात की सुविधाएं

आज से कई वर्ष पहले जो लोग माता वैष्णोदेवी की यात्रा पर आया करते थे, उनमें से अधिकांश यात्री जम्मू के श्री रघुनाथ मन्दिर में ही ठहरा करते थे। उस काल में इस मन्दिर के साथ महाराजा रणवीर सिंह द्वारा बनवाई गई एक बहुत बड़ी सराय थी जिसमें सैंकड़ों यात्री एक साथ ठहर सकते थे। पर बाद में इस सराय को धर्मार्थ ट्रस्ट ने हरी नन्दा नामक एक सम्पन्न व्यक्ति को किराए पर दे दिया जिसने इस सराय को हरि सिनेमा के रूप में परिवर्तित कर दिया। इसके उपरान्त यात्री मन्दिर के परिसर में ही ठहरने लगे।

ईस्वी वर्ष 1955 के बाद यात्रियों की संख्या में वृद्धि का जो क्रम चला उससे जम्मू व कटड़ा में नई-नई धर्मशालाओं के साथ-साथ अनेक होटलों का भी निर्माण किया जाने लगा। देश में आर्थिक विकास के प्रभाव से यात्रियों में भी धर्मशालाओं की अपेक्षा होटलों में विश्राम करने की प्रवृत्ति बढ़ने लगी। जब यात्रियों की संख्या में प्रतिवर्ष लाखों की वृद्धि होने लगी तो जम्मू-कश्मीर सरकार का ध्यान इस ओर आकृष्ट हुआ। सरकार ने होटल निर्माण को औद्योगिक विकास कार्यक्रम के के अन्तर्गत घोषित करके, होटल बनाने वालों को वित्तीय सहायता प्रदान करने की घोषणा की। सरकार के इस प्रोत्साहन से जम्मू व कटड़ा क्षेत्र में होटल निर्माण की प्रक्रिया में बहुत गति आई।

गत पांच-सात वर्षों में आधुनिक सुविधाओं से आपूर्ण बहुत से होटल बने हैं और इससे यात्रियों की आवास समस्या काफी सीमा तक हल हुई है। होटल एशिया जम्मू और होटल एशिया कटड़ा वैष्णोदेवी विशेष सुविधाओं के लिए उल्लेख योग्य हैं। इन होटलों में सम्पन्न यात्री ही ठहरते हैं। आम यात्री तो आमतौर पर धर्मशालाओं में अथवा साधारण होटलों में विश्राम करना चाहते हैं। जम्मू में विनायक मिश्र धर्मशाला, गीताभवन धर्मशाला, अग्रवाल धर्मशाला आदि में भी यात्रियों को आवास की सुविधा प्राप्त है।

अमीर यात्रियों की बात अलग है। सामान्य आर्थिक स्थिति का यात्री आज श्री रघुनाथ मन्दिर में ही ठहरना पसन्द करता है। एक तो यह मन्दिर बस अड्डे के बिल्कुल समीप है और दूसरा उत्तरी भारत का यह सब से विशाल मन्दिर है जिसे यात्री अवश्यमेव देखना चाहते हैं।

इस मन्दिर के परिसर में यात्रियों के आवास के लिए तीन भवन उपलब्ध हैं। जम्मू-कश्मीर राज्य के अन्तिम डोगरा शासक महाराजा हरिसिंह जी की धर्म पत्नी तथा डा0 कर्णसिंह जी की माता 'महारानी तारादेवी स्मारक धर्मशाला' में निशुल्क आवास की सुविधा है। इस धर्मशाला में दस कमरे और एक हाल है इस धर्मशाला को डा0 कर्णसिंह जी ने अपनी पूज्य माता जी की स्मृति में ईस्वी वर्ष 1969 में बनवाया था।

इसी धर्मशाला के साथ सटा हुआ डा0 कर्णसिंह जी के पिता महाराजा हरिसिंह जी की स्मृति में बनाया गया हरिभवन है। इस भवन में चौदह कमरे और तीन बड़े-बड़े हाल हैं। इसमें होटलों से अपेक्षाकृत सस्ती दरों पर आवास की सुविधा उपलब्ध है। हाल कमरों में विश्राम करने वाले यात्रियों से एक दिन का केवल चार रुपये प्रतियात्री किराया

वसूल किया जाता है। विछाने के लिए दरियां और सर्दी के मौसम में ओढ़ने के लिए कम्बलों की आपूर्ति की व्यवस्था है।

महाराजा रणवीर सिंह (1856-1885) की पुण्य शताब्दी के अवसर पर तीन अक्तूबर ईस्वी वर्ष 1985 में धर्मार्थट्रस्ट जम्मू व कश्मीर द्वारा बस स्टैण्ड के विल्कुल समीप आधुनिक सुविधाओं से आपूर्ण, स्वच्छ, सुन्दर और आकर्षक रणवीर यात्री भवन के नाम से एक विश्रामगृह का निर्माण करवाया गया है। इसमें सुसज्जित पच्चीस क़मरे हैं। इस भवन में आवास शुल्क अनुदान के रूप में लिया जाता है।

इसके अतिरिक्त श्री रघुनाथ मन्दिर का परिसर इतना विस्तृत है कि इसमें कहीं भी यात्री विश्राम कर सकते हैं। पर ऐसे यात्रियों को स्नान और शौच की समस्या का सामना करना पड़ता है।

जम्मू से कटड़ा पहुँचने वाले यात्री तत्काल यात्रा पर रवाना हो जाते हैं। रात हो, चाहे दिन, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता, क्योंकि माता वैष्णो का दरवार भक्तों के लिए दिन रात खुला रहता है। केवल दो घण्टे प्रात: और सायंकाल को माता की पूजा और आरती के समय थोड़ी रूकावट होती है। इसके अतिरिक्त यात्रा का मार्ग, इतना साफ, सुरक्षित प्रकाश से आपूर्ण एवं यात्रियों के आवागमन से गुंजायमान रहता है कि रात में भी दिन का आभास होता है।

कटड़ा में आज से बीस-पच्चीस वर्ष पहले तक होटलों का नामो-निशान तक न था। यात्रा भी केवल आश्विन मास से आरंभ होकर मार्गशीर्ष मास तक, केवल तीन महीने ही हुआ करती थी। इन्हीं तीन महीनों में यात्रियों की अधिक संख्या हुआ करती थी। वर्ष के वाकी दिनों में गिनती के यात्री आया

करते थे। अतः कटड़ा में रुकने वाले यात्री स्थानीय लोगों के घरों में ही ठहरा करते थे। इस काल में धर्मार्थट्रस्ट ने यात्रियों की सुविधा के लिए एक बहुत बड़ी धर्मशाला बनवाई। इस धर्मशाला में भी यात्रियों को निशुल्क दरियां और कम्बल देने की व्यवस्था थी। इसी क्रम में आदि कुमारी और माता वैष्णो देवी जी के भवन के समीप भी धर्मशालाओं का निर्माण करवाया गया था। समय के प्रभाव से जब ये भवन जीर्ण-शीर्ण हो गए तो धर्मार्थट्रस्ट ने इनके स्थान पर नए भवन बनवाए। ईस्वी वर्ष 1974 में धर्मार्थट्रस्ट ने माता आदिकुमारी तीर्थ पर प्रताप भवन नामक धर्मशाला का निर्माण करवाया था ताकि दरबार में आने-जाने वाले यात्री खराब मौसम अथवा आवश्यकता पड़ने पर, यहां आराम से रह सकें। जो यात्री बड़े आराम से यात्रा करना चाहते थे और माता आदि कुमारी के तीर्थ पर भी एक, आध दिन के लिए रुकना चाहते थे, उनके लिए यह धर्मशाला वरदान सिद्ध हुई। इसके अतिरिक्त दरबार में आने-जाने वाले यात्री भी इस स्थान पर विश्राम करके अपनी थकावट मिटाकर पुनः तरोताजा होकर यात्रा पर अग्रसर होने लगे।

इस धर्मशाला में बाईस कमरे तथा दो बड़े-बड़े हाल है जिनमें आवश्यकता पड़ने पर एक साथ दो हजार यात्री ठहर सकते हैं। स्नानागृह, फ्लश शौचालय दरियां और कम्बल इत्यादि सभी आवश्यक सुविधाओं का इसमें पूर्ण प्रबन्ध है। इससे कुछ ऊपर जाकर तीर्थमार्ग के सबसे ऊँचे स्थान सांझी छत पर "कर्णभवन" नामक एक और धर्मशाला है जिसमें तीन सौ व्यक्तियों के लिए आवास की सुविधा है।

धर्मार्थ ट्रस्ट द्वारा नियंत्रित माता वैष्णोदेवी जी के दरबार में शक्ति-भवन-नामक धर्मशाला में पांच हजार यात्रियों के

ठहरने की व्यवस्था थी। धर्मार्थट्रस्ट के इन प्रबन्धों से प्रभावित और प्रेरित होकर पं० श्रीधर के वंशज बारीदारों ने भवन और कटड़ा के क्षेत्र में दो बड़ी-बड़ी धर्मशालाओं का निर्माण करवाया था।

अगस्त 1986 में तीर्थक्षेत्र की ये सभी धर्मशालाएं "माता वैष्णोदेवी शराईन बोर्ड" के स्वामित्व में आ गईं। बोर्ड ने नव निर्माण के साथ-साथ इन प्राचीन भवनों में आवश्यक, मुरम्मत और सुधार करके अधिक से अधिक आराम और सुविधादायक बना दिया है। इसके अतिरिक्त यात्रियों के आवास के लिए एक करोड़ रुपये की लागत से एक "रेजिडैन्शल कम्पलैक्स" बनाया जा रहा है जिसमें पांच सौ यात्रियों के ठहरने की व्यवस्था होगी। आवास और अन्य सुविधाएं प्रदान करने के लिए बोर्ड ने अगस्त 1986 से अगस्त 1988 तक की अवधी में लगभग साढ़े पाँच करोड़ रुपये खर्च किए हैं।

यातयात—

माता वैष्णोदेवी जी की यात्रा करने के लिए रेल और बस द्वारा किए जाने वाले सफर के अतिरिक्त यात्री को चौदह किलोमीटर की पैदल यात्रा भी करनी पड़ती है। देश के विभिन्न भागों से सुफरफास्ट, जेहलम एक्सप्रैस, मद्रास जनता, हिमसागर, शालोमार एक्सप्रैस, जम्मूमेल आदि रेलें जम्मू तक यात्रियों को लाती हैं। दिल्ली, हरियाणा, पंजाब, हिमाचल प्रदेश से अब बसों मे भी बहुत से यात्री सीधे कटड़ा पहुँचने लगे हैं।

जम्मू रेलवे स्टेशन पर से बस अड्डे तक पहुंचने के लिए मेटाडोर, टैक्सी अथवा आटोरिक्शा मिल जाता है जहां से

उन्हें कटड़ा के लिए बसें उपलब्ध हैं। जो यात्री टैक्सी द्वारा ही कटड़ा पहुँचना चाहें, उन्हें बस अड्डे पर जाने की आवश्यकता नहीं। कटड़ा से आगे घोड़े, पालकियां और पीठ पर बच्चे उठाने वाले कुली उपलब्ध हैं। इन सबके रेट बोर्ड द्वारा नियत कर दिए गए हैं। आमतौर पर प्रत्येक यात्री कटड़ा से मां के दरबार में पैदल ही जाना चाहता है। पैदल चलने में असमर्थ वृद्ध और छोटे बच्चे ही आमतौर पर इन वाहनों का उपयोग करते है। अब तो जम्मू और कटरा से सांझीछत तक पवनहंस नामक हैलीकाप्टर सेवा भी आरंभ हो गई है।

यातायात के साधनों में कितना ही विकास क्यों न हो, यात्रा का जो सुख पैदल चलने में है, उसकी तुलना नहीं की जा सकती। यही कारण है कि आज भी माता वैष्णोदेवीजी की यात्रा पर आने वाले लाखों यात्री कटड़ा से आगे की यात्रा पैदल तय करने को ही अधिमान देते हैं।



अन्य दर्शनीय स्थान

श्री रघुनाथ मन्दिर

उत्तर भारत के प्रमुख और प्रसिद्ध देवस्थान श्री रघुनाथ मन्दिर का निर्माण जम्मू कश्मीर राज्य के शूरवीर और प्रतापी महाराजा श्री रणवीर सिंह जी ने करवाया था। इस प्रकार के भव्य और विशाल मन्दिर के निर्माण की कामना जम्मू-काश्मीर तिब्बतादि के महाराज गुलाबसिंह जी ने की थी। उनकी इच्छा के अनुसार जब सारी योजना तैयार हो गई तो विक्रमी संवत् 1812 के फाल्गुन मास की शुक्लपक्ष की पंचमी तिथि के शुभ महूर्त पर महाराजा ने इस मन्दिर की आधार-शिला रखी और अपने पुत्र महाराजा श्री रणवीर सिंह जी को इस योजना को पूरा करने का आदेश दिया। मन्दिर में लगे शिलालेख के अनुसार महाराजा श्री रणवीर सिंह जी ने अपने राज्याभिषेक के समय अपने कुलदेवता भगवान श्री राम, उनके परिवार व अन्य देवी-देवताओं की मूर्तियों की स्थापना करवाई।

उस काल में रेलगाड़ी बजीराबाद (पाकिस्तान) तक आती थी। जम्मू, पठानकोट, स्यालकोट आदि कहीं पर भी रेलवे स्टेशनों की स्थापना नहीं हुई थी। राजस्थान के जयपुर नगर में सभी मूर्तियों का निर्माण हुआ। पहले उन्हें जयपुर से बजीराबाद स्टेशन तक लाया गया। फिर बैलगाड़ियों और हाथी गाड़ियों के द्वारा इन्हें निर्माण स्थल तक पहुंचाया गया।

इस परिसर के मुख्य मन्दिर में मुख्य मूर्ति भगवान-राम, माता सीता और श्री लक्ष्मण जी की है। यही केन्द्रीय और सबसे विशाल और भव्यतम मन्दिर है जिसके चारों ओर बने हुए अहातों में लाखों शालग्राम तथा पुराण प्रसिद्ध विभन्न देवी-देवताओं, ऋषि-मुनियों, धर्मी-असुरों, राजाओं और भक्तजनों की काले और सफेद संगेमरमर के शिला खण्डों पर खनित छोटी, मध्यम और वृहत् आकार की मूर्तियां हैं। मुख्य मन्दिर में श्रीराम की मूर्ति काले संगेमरमर की है और सीता तथा लक्ष्मण की श्वेत संगेमरमर का इस मन्दिर के इर्द-गिर्द चौदह और विशाल मन्दिरों की स्थापना की गई है जिनमें क्रम से शेषनाग की शय्या पर विश्राम करते हुए विष्णु और उनकी चरण सेवा करती हुई लक्ष्मो, गणपति गणेश कैकेयी के पुत्र भरत सुमित्रा के पुत्र लक्ष्मण के छोते भाई शत्रुघ्न, श्री नृसिंह, राधा-कृष्ण, वराह, वामन, माता महालक्ष्मी, मत्स्य भगवान्, कश्यप भगवान्, विराट, शिव और सूर्य तथा सत्य-नारायण जी की आदमकद मूनियां विराजमान हैं। श्री रघुनाथ जी का मन्दिर सब से बड़ा और सबसे ऊंचा है। परिसर के चारों कोनों में स्थित गणेश, राधाकृष्ण, माता महालक्ष्मी तथा भगवान् शिव के मन्दिर इससे कुछ छोटे हैं। बाकी के दस मन्दिर बड़ें-बड़े होने पर भी ऊंचाई और विशालता में इनसे कुछ कम हैं।

श्री रघुनाथ मन्दिर की पहली परिक्रमा में जय-विजय, शनिदेव, पूर्व, दक्षिण, पश्चिमऔर उत्तरदिशा की लघु आकार की मूर्तियां हैं।

दूसरी परिक्रमा के आरम्भ में भगवान् श्रीराम और माता सोता के परम सेवक श्री हनुमान जी हाथ जोड़े खड़े हैं। हनुमान जी की यह मूर्ति अत्यंत विशाल और भव्य है। यहीं

से अहातों का क्रम आरम्भ होता है जो संख्या में आठ हैं। इन सब में श्रीराम की कथा से सम्बन्धित तथा पुराणों में वर्णित अवतारी देवताओं, असुरों, ऋषि-मुनियों राजाओं और भगवान् के प्रसिद्ध भक्तों की मूर्तियां हैं। अहाता नम्बर एक से लेकर अहाता नम्बर आठ तक इन मूर्तियों के नाम क्रम से इस प्रकार हैं :—

1. जीवात्मा
2. परमात्मा
3. ज्ञानात्मा
4. श्रीकृष्ण
5. श्री बलराम
6. श्रीप्रद्युम्न
7. अनिरुद्ध
8. बाल हनुमान
9. दत्तात्रय
10. भगवान् का विराट रूप
11. मत्स्य अवतार
12. कूर्म अवतार
13. नृसिंह अवतार
14. वराह अवतार
15. हय-ग्रीव अवतार
16. कल्कि अवतार
17. नर-नारायण
18. सुखायण वैद्य
19. कपिलदेव
20. विक्रमादित्य
21. जनमेजय
22. पृथु
23. राजारघु
24. सुग्रीव
25. विभीषण
26. अंगद
27. माण्डवी-भरत
28. लक्ष्मण
29. सीता और लक्ष्मण
30. राम सैनिक
31. जामवन्त
32, ब्रह्मप
33. महादेव
34. इन्द्र
35. अग्नि
36. यम
37. शेषनाग
38. वरुण
39. वायु
40. ऋषिकेश
41. वाल्मीकी
42, विश्वामित्र

43. गौतम
44. मकरध्वज
45. धर्मपाल
46. अर्थदेव
47. श्रद्धादेव
48. मार्कण्डेय
49. लक्ष्मी नारायण
50. ध्रुव
51. वसिष्ठ
52. सत्यनाराण
53. भारद्वाज
54. जमदग्नि
55. अत्रि
56. जय-विजय
57. सनक
58. सनंदन
59. सनातन
60. कुमार
61. कुमुद
62. द्विविद
63. दधिवल
64. रामसैनिक
65. कोस्तुभ माढी
66. शंख
67. चक्र
68. गदा
69. पद्म 70. दुर्गा
70. दुर्गा
71. कृपाचार्य
72. द्रोणाचार्य
73. राजा बलि
74. विद्याधर
75. धर्मकेतु
76. चित्रकेतु
77. हरिश्चन्द्र
78. अगस्त्य
79. प्रह्लाद
80. कुबेर
81. बद्रीनाथ
82. वामदेव
83. केवट
84. भरत
85. नारायण
86. विश्वकर्मा
87. अग्निदेव
88. दुर्वासा
89. भृगु
90. शिव
91. शुकदेव
92. श्रीकृष्ण
93. शिव-पार्वती
94. रामेश्वर
95. पतंजली
96. नारद
97. यमदूत
98. धर्मराज

99. चित्रगुप्त
100. साक्षी गोपाल
101. धर्मराज-गन्धर्व
102. ग्राह
103. गज
104. मान्धाता
105. दशरथ और उनकी रानियां
106. बालि
107. भीष्म
108. जटायु
109. संपाति
110. दक्ष
111. कार्तिकेय
112. बारह सूर्य मूर्तियां

इनके अतिरिक्त कुछ दूसरे मन्दिरों में वाल्मीकि, नटराज, गणेश और बगलामुखी देवी की मूर्तियां हैं ।

मन्दिर परिसर के पूर्वीभाग में महाराजा रणवीरसिंह, महाराजा गुलाबसिंह तथा राजा अमरसिंह जी के समाधि मन्दिर बनाए गए हैं। इनमें महाराजा रणवीरसिंह जी का समाधि मन्दिर सबसे विशाल, उच्च और सुन्दर है। इस समाधि में स्थापित रुद्र का आकार इतना बड़ा है कि उसे देखकर आश्चर्य होता है । इस समाधि मन्दिर के गगन चुम्बी और चमकीले कलश दूर-दूर से दिखाई देते हैं ।

महाराजा गुलाबसिंह जी का समाधि मन्दिर इससे काफी छोटा है । परन्तु इस मन्दिर की चारों तरफ की दीवारें स्वर्ण-पत्रों से मण्डित होने के कारण सूर्य और बिजली के प्रकाश में चमकती रहती हैं। महाराजा गुलाबसिंह की यह स्वर्णिम समाधि डोगरा भूमि के उस स्वर्णिम युग का स्मारक है जिसमें छोटा सा जम्मू राज्य एक विशाल जम्मू-कश्मीर राज्य के रूप में उभरा था । इसी समाधि के वाम भाग में महाराजा हरिसिंह जी के पिता राजा अमरसिंह जी का समाधि मन्दिर है । इन समाधि मन्दिरों के मध्यभाग में वेद मन्दिर एवं श्री हनुमान जी के मन्दिर शोभायमान हैं ।

श्री रघुनाथ मन्दिर की दा प्रमुख विशेषताएं हैं। संगेमरमर को अत्यंत सुन्दर मूर्तियां तथा लाखों को संख्या में स्थापित शालिग्राम। शालिग्राम का सम्बन्ध गण्डकी नदी के साथ है। गण्डकी नदी की गणना भारत की पवित्रतम नदियों के साथ की गई है।[1] गण्डकी नदी सलेमपुर-नेपाल से निकलकर शैल-ग्राम होती हुई गंगा में मिल जाती है। इस नदी की उत्पत्ति के सम्बन्ध में शिव पुराण[2], स्कन्दपुराण[3] और ब्रह्मवैवर्त पुराण[5] में कथाएं उपलब्ध होती हैं। इन कथाओं के अनुसार शंख चूड़ नामक राजा अपनी पतिव्रता पत्नी तुलसी की शक्ति से देवताओं के लिए भी अजेय हो गया। तब विष्णु ने छल करके शंखचूड़ का रूप धारण कर तुलसो के सतीत्व को नष्ट कर दिया जिससे शंखचूड़ की मृत्यु सम्भव हो गई। इस छल से दुखी तुलसी ने मरने से पहले भगवान् विष्णु को शाप देते हुए कहा :—

"भगवान ! आपका हृदय पत्थर के समान है। आप में थोड़ी सी भी दया नहीं है। आज आपने छल से मेरे इस शरीर के स्वामी को मार डाला। आपका हृदय अवश्य ही पत्थर का है। तभी तो आप इतने कठोर, इतने निर्दयी बन गए। इसलिए अब आप को मेरे शाप से पत्थर का रूप होकर पृथ्वीपर रहना होगा, क्योंकि अपने बिना किसी अपराध के अपने भक्त को हत्या करवाई है।"

---

1. (क) वाराह पुराण : 214/48
   (ख) मार्कण्डेय पुराण : भारतवर्ष विभाग वर्णन
2. शिवपुराण : रुद्र संहिता, युद्ध खण्ड, अ० 13-26
3. स्कन्द पुराण : वैष्णव खन्ड, अ० 14-23
4. लिंग पुराण : पूर्वार्ध, अ० 7
5. ब्रह्मवैवर्त पुराण : प्रकृति खण्ड, अ० 14-29

यह सुन कर भगवान् विष्णु ने रोती हुई तुलसी से कहा : "तुलसी ! तुम्हारा यह शरीर नदी के रूप में परिणत होकर गण्डकी नाम से प्रसिद्ध होगा। मैं तुम्हारे शाप को सत्य करने के लिए भारतवर्ष में शालिग्राम बनकर रहूंगा। गण्डकी नदी के तट पर मेरा वास होगा। वहां रहने वाले करोड़ों कीड़े अपने तीखे दांतरूपी औजारों से काट-काटकर उन शालिग्रामों में मेरे चक्र का चिन्ह बनाएंगे। इन चक्र चिह्नों के अनुसार उन शालिग्रामों के अनेक नाम और रूप होंगे जहां ये शालिग्राम होंगे वहाँ लक्ष्मी सहित मेरा वास होगा। शालिग्राम की पूजा सुख, समृद्धि, शांति और आरोग्य देने वाली और पापों का नाश करने वाली होगी। शंखचूड़ की हड्डियों से शंख की उत्पत्ति होगी। वही शंख अनेक प्रकार के रूपों में विराजमान होकर देवताओं की पूजा में पवित्र माना जाएगा। जिस स्थान पर शालिग्राम, तुलसा और शंख ये तीनों विराजमान होंगे, वहां मेरा वास होगा।[1]

यह कह कर भगवान् श्रीहरि मौन हो गए। उसी समय तुलसी की देह से गण्डकी नदी उत्पन्न हुई और भगवान् श्री हरि भी उसके तटपर मनुष्यों के लिए पुण्यप्रद शालिग्राम बन गए।

"वराह पुराण", "धर्म संहिता" और 'मेरुतन्त्र" आदि में भी थोड़े-बहुत अन्तर के साथ इसी प्रकार की कथाएं मिलती हैं। इन ग्रन्थों के अनुसार शालिग्राम शिला में भगवान् विष्णु के साथ-साथ अन्य देवताओं की पूजा होतो है। परन्तु दूसरी मूर्तियों की जिस प्रकार प्रतिष्ठा की जाती है उस प्रकार शालि-ग्राम शिला की प्रतिष्ठा नहीं होती। शालिग्राम शिला में भगवान् विष्णु सदैव विराजमान रहते हैं। इसलिए इसमें

1. ब्रह्मवैवर्त पुराण : प्रकृति खण्ड, अ० 22

देवताओं का अह्वान ओर विसर्जन नहीं होता। शालिग्राम के इसी महत्व को दृष्टि में रखकर श्री रघुनाथ मन्दिर परिसर में लाखों की संख्या में इनकी स्थापना की गई है।

संक्षेप में मन्दिर परिसर में स्थापित मूर्तियों और शालि-ग्राम के सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि कुछ मूर्तियों को छोड़कर जिनका सम्बन्ध महाभारत के कुछ प्रसंगों के साथ है अन्य मूर्तियां रामचरित्र से सम्बन्धित हैं। कुछ मूर्तियां श्री राम के परिवार और उनके पूर्वजों की हैं तो कुछ उनके सेवकों सहायकों और भक्तों की। वनवास के चौदह वर्षों में उनका जिन ऋषि-मुनियों से मिलन हुआ था अथवा सीता हरण के उपरान्त लंका विजय में जो लोग उनके सहायक हुए थे या सम्पर्क में आए थे, उनकी मूर्तियां भी स्थापित की गई हैं। इस सम्बन्ध में लिखा है :—

"महाराजा ने श्री रघुनाथ जी के मन्दिर में परितः "राम गपनीयोपनिषद" प्रोक्त श्री रघुनाथ जी के परिवार देवता की मूर्ति, पंचायतन मूर्ति, अवतार मूर्ति और बारह लाख शालिग्राम स्थापना का हुक्म दिया।[1]

---

1. शिलालेख, श्री रघुनाथ मन्दिर जम्मू।

श्री रणवीरेश्वर मन्दिर

जम्मू में यात्रियों के लिए एक महत्वपूर्ण दर्शनीय स्थान नगर के मध्यभाग में एक ऊंचे धरातल पर निर्मित भगवान् शिव का रणवीरेश्वर नामक मन्दिर है। डोगरा राजवंश की समृद्ध और लम्बी परम्परा में महाराजा रणवीरसिंह का युग जम्मू-कश्मीर राज्य का स्वर्ण युग कहा जाता है। इन्हीं के कारण जम्मू नगर को "सिटी आफ टैम्पलस" का नाम प्राप्त हुआ था।

जम्मू-कश्मीर के महाराजा गुलाबसिंह जी के तृतीय पुत्र रणवीरसिंह जी का जन्म ईस्वी सन् 1830 में हुआ। 20 फरवरी 1856 को 26 साल की अवस्था में राजसिंहासन पर बैठे। 29 वर्ष तक आदर्श राजा की तरह प्रजा के कल्याण के अनेक अमर कार्य करके 12 सितम्बर 1885 को 55 वर्ष की अवस्था में दिवंगत हुए।

कश्मीर में शिव मन्दिरों का निर्माण करवा कर वहाँ के प्राचीन राजा जिस प्रकार भगवान् शिव को अपना और राज्य का स्वामी मानकर उनके साथ अपना नाम जोड़कर मन्दिरों का नामकरण करते रहे हैं, उसी परम्परा का पालन करके महाराजा रणवीरसिंह जी ने जम्मू नगर में भगवान शिव का विशाल मन्दिर बनवा कर उसका नाम श्रीरणवीरेश्वर मन्दिर रखा। जिनमें समस्त मंगल विद्यमान हैं—वे शिव हैं। शिव का पूर्व नाम रुद्र था। शिव का अर्थ कल्याण और रुद्र का अर्थ है रुलाने वाला। संसार में संकट और संहार का हेतु यही रुद्र

है।[1] अथववेद में रुद्र का वर्णन सर्वनाशक के रूप में हुआ है।[2] इसके अतिरिक्त रुद्र का वर्णन अग्नि रूप में भी हुआ है।[3] अपने इसी प्रभाव से वे कामदेव को भस्म करते हुए दिखाई देते हैं। वे इतने शक्तिशाली हैं कि समस्त चराचर को भस्म करने में समर्थ हैं।[4]

ऋग्वेद और ब्राह्मण ग्रन्थों में जो रुद्र था, उसने काल क्रम से आगे चलकर उपनिषदों में शिव का रूप ले लिया। रुद्र का नाम शिव क्यों पड़ा ? इस सम्बन्ध में "वाजसनेय संहिता" में लिखा है कि रुद्र अपने भक्तों के प्रति हिंसा नहीं करते। उनके क्रोधित न होने से प्रजा का शिव (कल्याण) होता है। वे अपने सेवकों को सब प्रकार की विपदा से बचाते हैं, इसलिए वे शिव हैं। इस प्रकार एक ही देवता के संहारक रूप को रुद्र और कल्याणकारी रूप को शिव कहा गया। शिव की पूजा मूर्ति और लिंग दोनों में किए जाने का कारण यह है कि एक मात्र शिव ही ब्रह्मरूप होने के कारण निराकारतथा रूपवान् होने के कारण साकार हैं। रुद्र उनके निराकार रूप का प्रतीक है और शिव साकार रूप का। रणवीरेश्वर मन्दिर में उनके दोनों रूप हैं।

जिस स्थान पर रणवीरेश्वर मन्दिर की स्थापना की गई है, पूर्वकाल में यह गहन वनभूमि से आवृत पहाड़ी थी। इस सुनसान पहाड़ी पर एक नाथ योगी महात्मा आकर रहने लगे। इनका नाम नादगिरि था। अपनी यौगिक शक्तियों के द्वारा उन्होंने अनेक लोगों को आधि-व्याधियों से मुक्त किया। उनके

1. 1/114/4
2. अथर्ववेद 6/90/1
3. अग्निरपि रुद्र उच्यते। सामवेद 1/15
4. शिव पुराण : 24/29

आशीर्वाद और अनुकम्पा से बहुत से लोगों का कल्याण हुआ। और इस प्रकार के लोक मंगल के कार्य करने के कारण योगी नादगिरि एक सिद्ध योगी के रूप में विश्रुत हो गए।

20 फरवरी सन् 1956 को जम्मू कश्मीर के महाराजा बनने के उपरान्त रणवीरसिंह जी ने अपने राज्य की शासन व्यवस्था को सुदृढ़ करने के लिए गिलगित, यासीन, हुनजा, लद्दाख आदि क्षेत्रों में अपनी सेना भेजी। इन अभियानों में महाराजा को आशा के अनुकूल सफलता नहीं मिली। महाराजा रणवीरसिंह जी की इस चिन्ता के विषय में जब योगी नादगिरि जी को बताया गया तो उन्होंने महाराजा को कहला भेजा कि भविष्य में जब कभी भी ऐसे अभियान पर सेना भेजी जाए तो उसके पूर्व उन्हें अवश्य सूचित किया जाए। सन् 1860 ई० में गिलगित और यासोन राज्य को अपवे अधीन करने के उपरान्त भी यासीन राज्य में बगावत का अन्त नहीं हुआ था। डोगरा सेना के वहाँ से हटते ही यासीन के ल ग विद्रोह पर उतर आते। महाराजा के द्वारा व्यापारियों के माध्यम से गिलगित और वदकशां को भेजे गए समान को वे रास्ते में ही लूट लेते। व्यापारियों से मारपीट करके उन्हें कैद कर लेते।

इससे परेशान होकर महाराजा ने सन् 1863 ई० के आरम्भ में जनरल होशियार सिंह के नेतृत्व में एक बड़ी सेना यासीन पर नियंत्रण करने के लिए भेजने का निर्णय किया। इसकी सूचना योगीराज नादगिरि जी को भी दे दी गई। इस बार का सैनिक अभियान हुआ।[1] महाराजा श्री रणवीरसिंह योगीराज के पास गए। उनके आशीर्वाद और कृपा के लिए कृतज्ञता प्रकट की। उनकी इच्छा जानकर उनके लिए एक भव्य शिव मन्दिर के निर्माण का निर्णय किया।

---

1. ड्रियु, दी जम्मू एण्ड कश्मीर टैरीटरीज : पृ० 446

इस संकल्प के फलस्वरूप सन् 1963 ई० की शिवरात्रि के पावन पर्व पर इस मन्दिर की आधार शिला रखी गई। जब मन्दिर का निर्माण कार्य पूरा हुआ तब ग्यारह नर्म देश्वर शिव-लिंग तथा ग्यारह स्फटिक शिवलिंग अलग-अलग जलैहरियों में स्थापित किए गए। मध्यवर्ती शिवलिंग विशाल आकार का तथा सात फुट ऊँचा है। मन्दिर के पूर्ण निर्माण के उपरान्त महाराजा ने इसका नाम श्री रणवीरेश्वर मन्दिर रखा और महात्मा नादगिरि जी को इसकी प्रबन्ध-व्यवस्था देखने के लिए प्रार्थना की तथा उन्हें इसका महन्त बना दिया।

कुछ समय के उपरान्त महाराजा रणवीरसिंह जी के मन में इस अद्भुत और विशाल मन्दिर में भगवान् शिव के साकार रूप की प्रतिमा स्थापित करने का विचार उत्पन्न हुआ। शीघ्र हा उन्होंने जयपुर के एक मूर्तियाँ बनाने वाले को भगवान् शिव और पार्वता की मूर्तियां बनाने का आदेश दिया। शिव और पार्वती की मूर्तियों की स्थापना से मन्दिर को शोभा में और अधिक विस्तार हुआ। कुछ समय के बाद इसमें पंच-वकत्रश्वर शिव की प्रतिमा भी स्थापित की गई।

समय के साथ-साथ इस मन्दिर में अनेक परिवर्तन होते रहे हैं। इसके मुख्य बरामदे की दीवारों पर अत्यंत मनोरम तैल-चित्रों के माध्यम से शिव लोला की अनेक झाँकियों को दिखाया गया है। शिव का ताण्डव नृत्य, शिव परिवार, सती को कंधे पर उठाए शिव, रामेश्वर पूजा, गणपति गणेश, शिव द्वारा यशोदा की गोद में बेठे श्रीकृष्ण के दर्शन, अमर कथा, शिव का विषपान, शिव का सती को वरदान तथा शिव का विष्णु को सुदर्शन चक्र प्रदान करना—आदि प्रसंगों के आकर्षक चित्र बनाए गए हैं। मुख्य बरामदे के सामने पीतल से निर्मित अत्यंत भव्य और सुन्दर नन्दीगण की मूर्ति है। इस मूर्ति को डा०

कर्णसिंह जी ने कर्नाटक प्रदेश के मैसूर नामक नगर से बनवा कर सन् 1974 ई० में स्थापित किया था। इसके पास ही नेपाल राज्य में बनाया गया पीतल का एक विशाल घण्टा भी लगा हुआ है। घण्टे के सामने भगवान शिव के बड़े पुत्र कार्तिकेय जी को संगेमरमर की प्रतिमा लगी है। मण्डप के दूसरी ओर शिव के छोटे पुत्र गणेश जी की मूर्ति है।

ईस्वी सन् 1983 और 1984 में इस मन्दिर में दो और मूर्तियों की स्थापना डा० कर्णसिंह जी द्वारा की गई थी। एक मूर्ति माता महाकाली की है जिसे रामलाल फेनी वाले ने समर्पित किया था तथा दूसरी मूर्ति पंचमुखी हनुमान जी की है जिसे श्री अनिल गुजराल ने बनवाया था। इस प्रकार धीरे-धीरे श्री रणवीरेश्वर मन्दिर परिसर का विकास होता गया। ईस्वी सन् 1985 में महाराजा रणवीर सिंह शताब्दी समारोह के अवसर पर 12 सितम्बर को मन्दिर परिसर में महाराजा रणवीरसिंह जी की आदमकद प्रतिमा की स्थापना की गई तो इसके फलस्वरूप इस देव स्थान के रूप और सौन्दर्य में विशेष निखार आ गया। महाराजा की मूर्ति के इर्द-गिर्द की सारी भूमि पर अत्यन्त सुन्दर संगेमरमर के शिला खण्ड लगा दिए गए है। एक तरफ हवन कुण्ड तथा दूसरी तरफ फब्बारे सहित उपवन का निर्माण किया गया है।

मन्दिर के आदि महन्त नादगिरि थे। उनके बाद क्रम से श्री राजेन्द्र गिरि, श्री प्रेमगिरि, श्री सरस्वती गिरि, श्री महादेव गिरि, श्री वृजमोहन गिरि, श्री कृष्णानन्द गिरि इस पद पर रहे। आजकल श्री लोकनाथ गिरि महन्त पदवी पर आसीन हैं। इनके समय में मन्दिर और उसके परिसर का मनोरम विकास हुआ है।

□

स्तोत्र महिमा

आधुनिक युग के व्यस्त जीवन में किसी भी सांसारिक व्यक्ति से पास इतना समय नहीं है कि वह आराम से घण्टा-दो घण्टा बैठकर उपासना कर सके। प्रत्येक व्यक्ति कम-से-कम परिश्रम और कम-से-कम समय में, अधिक से अधिक फल की कामना करता है। हमारे ऋषि-मुनियों ने इस बात को ध्यान में रखते हुए कुछ ऐसे स्तोत्रों और मन्त्रों की ओर संकेत किया है जिनका सीमित समय में पाठ इत्यादि करके अपेक्षित फल प्राप्त किया जा सकता है। इस दृष्टि से भगवती शक्ति की महिमा और लीलाओं का वर्णन करने वाली महत्वपूर्ण रचना 'दुर्गासप्तशती' है, जिसका आज भारत के कोने-कोने में प्रचार है। नवरात्रों में इसी ग्रन्थ का पाठ होता है और इसी से होम इत्यादि करवाया जाता है। विद्वानों ने इस रचना के सात सौ श्लोकों में से केवल सात श्लोक लेकर एक स्तोत्र की रचना की है, जिसे सप्तश्लोकी दुर्गा कहा जाता है। इस स्तोत्र का पाठ करने में पांच सात मिनट ही लगते हैं और भक्त अपने मन की सारी बात माँ भगवती से निवेदन कर देता है। जो लोग संस्कृत नहीं जानते, उनके लिए हिन्दी में—दुर्गा चालीसा—नाम की आरती है।

सभी प्रकार के सांसारिक कार्यों में सफलता के लिए शरीर का स्वस्थ होना अनिवार्य है। रोगी व्यक्ति का मन भी रोगी हो जाता है। स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन का निवास होता है। शरीर की अधिष्ठात्री देवी माता महाकाली है। शरीर के भीतरी और बाहरी शत्रुओं से रक्षा और निरोगता के लिए

माता महाकाली की स्तुति का विधान है। संसार में सुखी जीवन के लिए धन की आवश्यकता होती है। धन की अधिष्ठात्री देवी माता महालक्ष्मी हैं। माता महालक्ष्मी की कृपा से ही मानव सुखी और निश्चित जीवन बिता सकता है। धर्म, काम और मोक्ष उसके लिए सुलभ हो जाते हैं।

वाणी विद्या बुद्धि और ज्ञान को प्रदान करने वाली देवी महासरस्वती हैं। प्रत्येक मानव को विद्या प्राप्ति और साहित्य की रचना के लिए प्रतिभा, योग्यता और स्मरण शक्ति इन्हीं की दया से मिलती है। आध्यात्मिक रूप से देवी के ये तीनों रूप इच्छा, ज्ञान और क्रिया के प्रतीक हैं। संसार में इन तीनों के बिना कोई भी कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता। इनमें से एक का भी अभाव हो तो सभी कार्य रुक जाते हैं।

इन तीनों देवियों की कृपा प्राप्त करने के उद्देश्य से रचे गए अनेक स्तोत्र प्राचीन ग्रन्थों में मिलते हैं। उनमें तीन स्तोत्र प्रतिदिन पाठ करने वाले भक्तों के उपयोग के लिए दिए जा रहे हैं।



सप्तश्लोकी दुर्गा (चंडी)

ओं अस्य श्री दुर्गासप्तशती स्तोत्र मंत्रस्य नारायण ऋषिः अनुष्टुपछन्दः श्रीमहाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती देवता दुर्गा प्रीत्यर्थं सप्तश्लोकी दुर्गापाठे विनियोगः।

1. ओं ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा।
बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति ॥ 1/55-56

भगवान् विष्णु की योगनिद्रा रूपी महामाया ने सारे जगत् को मोहित कर रखा है। वही देवी भगवती ज्ञानियों के चित्त भी बलपूर्वक खींचकर मोह में डाल दिया करती है।

2. दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि।
दारिद्रयदुःखभयहारिणी का त्वदन्या
सर्वोपकार करणाय सदार्द्रचिता ॥ 4/17

हे दुर्गे ! स्मरण करने पर आप सभी प्राणियों को अभय कर देती हैं। स्वस्थ्य पुरष जब आपका स्मरण करते हैं, तो आप उन्हें अत्यन्त पवित्र बुद्धि देती हैं। दरिद्रता, दुःख एवं भय दूर करने के लिए आप सदा दया से युक्त होकर तत्पर रहती हैं।

3. सर्वमंगल मांगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ 11/10

हे देवी ! आप सभी मंगलों को देने वाली हैं। सभी कार्यों को सिद्ध करने वाली शिवा हैं। शरण में आए को रक्षा करने वाली, तीन नेत्रों वाली गौरी आपको नमस्कार है।

4. **शरणागत दीनार्त्त परित्राण परायणे।**
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते॥ 11/12

शरण में आए हुए दीन-दुखियों की रक्षा करने में संलग्न, सबके संकट निवारण करने वाली नारायणिदेवी ! आपको नमस्कार है।

5. **सर्वस्वरूपे, सर्वेशे सर्वशक्ति समन्विते।**
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते॥ 11/24

हे सर्वरूपे, सर्वेश्वरी, सभी शक्तियों से सम्पन्न दुर्गे ! हमारी भयों से रक्षा करें। आपको नमस्कार है।

6. **रोगानशेषानपहंसि तुष्टा-**
रुष्टा तु कामान्सकलानभीष्टान्।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां
त्वामाश्रिताह्यिश्राश्रयतां प्रयान्ति॥ 11/26

हे देवि ! जब आप प्रसन्न होती हैं तो सभी रोगों को नष्ट कर देती हैं। और क्रोध करने पर सभी कामनाएं नष्ट कर देती हैं। आपके सेवकों पर आपत्ति नहीं आती। वे तो दूसरें को भी आश्रय देते हैं।

7. **सर्वबाधा प्रशमनं त्रैलोकस्याखिलेश्वरि।**
एवमेव त्वया कार्यमस्मद् वैरि विनाशनम्॥ 11/39

हे सर्वेश्वरि ! आप सदा त्रिलोकी के संकट दूर करके, समस्त बाधाएं शान्त कर, इसी प्रकार हमारे शत्रुओं का नाश करती रहें।

—दुर्गा सप्तशती

दुर्गा चालीसा

नमो नमो दुर्गे सुख करनी । नमो नमो अम्बे दुख हरनी ॥
निरंकार है ज्योति तुम्हारी । तिहूं लोक फ़ैली उजियारी ॥
शशि ललाट मुख महाविशाला । नेत्र लाल भृकुटी विकराला ॥
रूप मातु को अधिक सुहावै । दरश करत जन अति सुख पावै ॥
तुम संसारि शक्ति लो कीना । पालन हेतु अन्न धन दीना ॥
अन्नपूरना हुई जगपाला । तुमहि आदि सुन्दरी बाला ॥
प्रलय काल सब नाशन हारी । तुम गौरी शिव शंकर प्यारी ॥
शिव योगी तुम्हरे गुण गावै । ब्रह्मा विष्णु तुम्हें नित ध्यावै ॥
रूप सरस्वति का तुम धारा । दे सुबुद्धि ऋषि मुनिन उबारा ॥
धरो रूप नरसिंह को अम्बा । परगट भई फाड़ के खम्बा ॥
रक्षा कर प्रह्लाद बचायो । हिरण्याक्ष को स्वर्ग पठायो ॥
लक्ष्मी रूप धरो जग माहीं । श्री नारायण अंग समाहीं ॥
क्षीर सिन्धु में करत विलासा । दयासिन्धु दीजै मन आसा ॥
मातंगी धूमावति माता । भुवनेश्वरी बगला सुखदाता ॥
श्री भैरव तारा जग तारणि । छिन्न भाल भव दुःख निवारणि ॥
केहरि वाहन सोह भवानी । लंगुर वीर चलत अगवानी ॥
कर में खप्पर खंग विराजे । ताको देखि काल डर भाजे ॥
सोहैं अस्त्र और त्रिशूला । जाते उठत शत्रु हिय शूला ॥
नाभि कोटि में तुम्हीं विराजत । तिहू लोक में डंका बाजत ॥
शुम्भ-निशुम्भ दानव तुम मारे । रक्तबीज संखन संहारे ॥
महिषासुर नृप अति अभिमानी । जेहि अघ भार मही अकुलानी ॥
रूप कराल कालि को धारा । सेन सहित तुम तिहि संहारा ॥
पड़ी गाढ़ संतन पर जब जब । भई सहाय मातु तुम तब तब ॥

आभापुर अरु वासन लोका। तब महिमा सब कहै अशोका ।।
ज्वाला ते है ज्योति तुम्हारी। तुम्हें सदा पूजें नर-नारी ।।
प्रेम भक्ति से जो जस गावै। दुख दारिद्र निकट नहिं आवै ।।
ध्यावें तुम्हें जो नर मन लाई। जन्म मरण ते सो छुटि जाई ।।
जोगी सुर नर कहत पुकारी। योग न होइ बिन शक्ति तुम्हारी ।।
शंकर ने अचरज जप कीनो। काम क्रोध जीति सब लीनो ।।
निशिदिन ध्यान धरा शंकर को। काहु काल नहिं सुमरो तुमको ।।
शक्ति रूप का मरम न पायो। शक्ति गई तब मन पछितायो ।।
शरणागत हुई कीर्ति बखानी। जै जै जै जगदम्ब भवानी ।।
भई प्रसन्न आदि जगदम्बा। दई शक्ति नहिं कीन बिलम्बा ।।
मोको मातु कष्ट अति घेरो। तुम बिन कौन हरे दुख मेरो ।।
आशा तृष्णा निपट सतावै। रिपु मूरख मोहि अति डर पावै ।।
शत्रु नाश कीजै महारानी। सुमिरौं इक चित तुम्हें भवानी ।।
करो कृपा हे मातु दयाला। ऋद्धि सिद्धि दे करहु निहाला ।।
जब लगि जिऊँ सदा फल पाऊं। तुम्हरो जस मैं सदा सुनाऊं ।।
दुर्गा चालीसा जो कोई गावै। सब सुख भोग परम पद पावै ।।
देवीदास शरण निज जानी। करहु कृपा जगदम्ब भवानी ।।

□

श्री महालक्ष्मी स्तोत्र

1. ओं नमः कमलवासिन्यै नारायण्यै नमो नमः ।
   कृष्णप्रियायै सारायै पद्मायै च नमो नमः ॥

भगवती कमलवासिनी को नमस्कार है। देवी नारायणी को बार-बार नमस्कार है। संसार की सारभूता कृष्णप्रिया भगवती पद्मा को अनेकशः नमस्कार है।

2. पद्मपत्रेक्षणायै च पद्मास्यै नमो नमः ।
   पद्मासनायै पद्मिन्यै वैष्णव्यै च नमो नमः ॥

कमलरत्न के समान नेत्र वाली, कमलमुखी भगवती महालक्ष्मी को नमस्कार है। पद्मासना, पद्मिनी एवं वैष्णवी नाम से प्रसिद्ध भगवती महालक्ष्मी को बार-बार नमस्कार है।

3. सर्व सम्पत् स्वरूपायै सर्वदात्र्यै नमो नमः ।
   सुखदायै मोक्षदायै सिद्धिदायै नमो नमः ॥

सर्व सम्पतस्वरूपिणी सर्वदात्री देवी को नमस्कार है। सुख देने वाली, मोक्ष देने वाली और सिद्धि देने वाली देवी को बार-बार नमस्कार है।

4. वैकुण्ठे या महालक्ष्मी लक्ष्मीः क्षीरोद सागरे ।
   स्वर्गलक्ष्मीरिन्द्र गेहे राजलक्ष्मी नृपालये ॥

जो देवी वैकुण्ठ में महालक्ष्मी, क्षीर समुद्र में लक्ष्मी, इन्द्र के स्वर्ग में स्वर्गलक्ष्मी, राजाओं के भवन में राजलक्ष्मी है।

5. गृहलक्ष्मीश्च गृहिणां गेहे च गृहदेवता ।
   सुरभी सा गवां माता दक्षिणा यज्ञ कामिनी ॥

जो गृहस्थों के घर में गृहलक्ष्मी, प्रत्येक घर में गृहदेवता, गोमाता सुरभी और यज्ञ की पत्नी दक्षिणा के रूप में विराजमान रहती है।

6. अदितिर्देवमाता त्व कमला कमलालये ।
स्वाहा त्वं च हविर्दाने कव्यदाने स्वधा स्मृता ॥

तुम देवताओं की माता अदिति हो । कमलालयवासिनी कमला भी तुम ही हो । हव्य प्रदान करते समय 'स्वाहा' और कव्य प्रदान करने के अवसर पर 'स्वधा' का जो उच्चारण होता है, वह तुम्हारा ही नाम है ।

7. त्वंहि विष्णु स्वरूपा च सर्वाधारा वसुन्धरा ।
शुद्ध सत्त्व स्वरूपा त्वं नारायण परायणा ॥

सबको धारण करने वाली विष्णुस्वरूपा पृथ्वी भी तुम्ही हो । भगवान् नारायण की सेवा में सदा तत्पर रहने वाली देवी ! तुम शुद्ध सत्त्वस्वरूपा हो ।

8. यया बिना जगत् सर्वं भस्मीभूतमसारकम् ।
जीवन्मृतं च विश्वं च शवतुल्यं यया बिना ॥

तुम्हारे बिना सारा जगत् भस्मीभूत एवं निःसार है । जीते जी ही मृतक है, शव के समान है ।

9. सर्वेषां च परा त्वं हि सर्व बान्धव रूपिणी ।
यया बिना न सम्भाष्यो बान्धवैर्बान्धवः सदा ॥

तुम सम्पूर्ण प्राणियों की श्रेष्ठ माता हो । सबके बान्धवरूप में तुम्हारा ही आगमन हुआ है । तुम्हारे बिना भाई अपने भाईयों से बात करने के योग्य नहीं रहता ।

10. त्वया हीनो बन्धुहीनस्त्वया युक्तः सबान्धवः ।
धर्मार्थ काम मोक्षाणां त्वं च कारण रूपिणी ॥

जो तुमसे हीन है, वह बन्धुजनों से हीन है । जो तुमसे युक्त है, वह बन्धुजनों से युक्त है । तुम्हारी ही कृपा से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्त होते हैं ।

11. **मातृहीनः स्तनत्यक्तः स चेज्जीवति देवतः।**
त्वया हीनो जनो कोऽपि न जीवत्येव निश्चितम् ॥

दूध पीने वाला बालक माता के न रहने पर भाग्यवश जी भी सकता है, परन्तु तुम्हारे बिना कोई भी जी नहीं सकता। यह बिलकुल निश्चित है।

12. **वयं यावत् त्वया हीना बन्धुहीनाश्च भिक्षुकाः।**
सर्व सम्पद् विहीनाश्च तावदेव हरिप्रिये ॥

जब तक मुझे आपका सहारा नहीं मिला, तब तक मैं बन्धुहीन, भिखारी और सब सम्पत्तियों से हीन था।

13. **राज्यं देहि श्रियं देहि बलं देहि सुरेश्वरि।**
कीर्ति देहि धनं देहि यशो मह्यं च देहि वै ॥

हे देवी ! मुझे राज्य दो, श्री दो, बल दो, कीर्ति दो, धन और यश दो।

14. **कामं देहि मतिं देहि, भोगान् देहि हरि प्रिये।**
ज्ञानं देहि च धर्मं च सर्वसौभाग्यमीप्सितम् ॥

मनचाही वस्तुएं दो, बुदि दो, भोग दो, ज्ञान दो, धर्म दो तथा मुंहमांगा सौभाग्य दो।

15. **प्रभावं च प्रतापं च सर्वाधिकार मेव च।**
जयं पराक्रमं युद्धे परमैश्वर्यमेव च।

इसके साथ-साथ मुझे प्रभाव, प्रताप सम्पूर्ण अधिकार, युद्ध में विजय, पराक्रम और परम ऐश्वर्य प्रदान करो।

□

श्री महाकाली स्तोत्र

(1) **कराल वदनां घोरां मुक्तकेशीं चतुर्भुजाम् ।**
कालिकां दक्षिणां दिव्यां मुण्डमाला विभूषिताम् ।।

जिनका रूप उग्र है, जो खुले केश वाली, चार भुजाओं वाली और मुण्डमाला से शोभायमान हैं ।

(2) **सद्यः च्छिन्नशिरः खड्ग वामाधोर्ध्वं कराम्वुजाम् ।**
अभयं वरदं चैव दक्षिणोध्वावर्ध पाणिकाम् ।।

जिनके एक हाथ में दैत्य का कटा हुआ सिर, दूसरे हाथ में कमल तथा शेष दो हाथों में भक्तों को अभय और वरदान देने वाली हैं ।

(3) **महामेघ प्रभाश्यामां तथा चैव दिगम्बरीम् ।**
कण्ठावसक्त मुण्डाली गलद्रुधिर चर्चिताम् ।।

जो प्रलय मेघ के समान श्याम, दिगम्बर वेश में रहने वाली तथा गले में रक्तयुक्त नरमुण्डों को धारण करने वाली हैं ।

(4) **कर्णावतंसतांनीतं शवयुग्म भयानकाम् ।**
घोरदष्ट्रां करालास्यां पीनोन्नत पयोधराम् ।।

जिनके कानों में शवों के भूषण हैं, जिनके दांत भयानक, मुख कराल और वक्षस्थल विशाल है ।

(5) **घोर रावां महारौद्रीं श्मशानालय वासिनीम् ।**
बालार्क मण्डलाकार लोचन त्रितयान्विताम् ।।

जो घोर शब्द करने वाली, श्मशान भूमि में वास करने वाली, उदीयमान सूर्य के समान तीन नेत्रों वाली हैं ।

(6) दन्तुरा दक्षिण व्यापि मुक्तालम्बी कचोच्चयाम् ।
शवरूप महादेव हृदयोपरि संस्थिताम् ॥

जिनके दांत तेज, केश लम्बे और खुले हैं। जो शवरूप महादेव के हृदय पर स्थित हैं।

(7) सुख प्रसन्न वदनां स्मेराननन् सरोरूहाम् ।
एवं संचिन्तयेत् कालीं सर्व कामार्थ सिद्धिदाम् ॥

जिनका मुख सुख से प्रसन्न हैं, जो मन्दहासिनी और कमल के समान नेत्रों वाली तथा सब प्रकार की कामनाओं को पूर्ण करने वाली हैं।

श्री महासरस्वती स्तोत्र

या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रावृता
या वीणावरदण्डमण्डितकरा या श्वेतपद्मासना ।
या ब्रह्माच्युतशङ्करप्रभृतिभिर्देवैः सदा वन्दिता
सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा ।।1।।

जो कुंद के फूल, चन्द्रमा, बर्फ और हार के समान सफेद हैं, जो शुभ्र कपड़े पहनती हैं, जिनके हाथ उत्तम वीणा से सुशोभित हैं, जो श्वेत कमलासन पर बैठती हैं, ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि देव जिनकी सदा स्तुति करते हैं और जो सब प्रकार की जड़ता हर लेती हैं, वे भगवती सरस्वती मेरा पालन करें ।

शुक्लां ब्रह्मविचारसारपरमामाद्यां जगद्व्यपिनीं
वीणापुस्तकधारिणीमभयदां जाड्यान्धकारापहाम् ।
हस्ते स्फाटिकमालिकां च दधतीं पद्मासने संस्थितां
वन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां शारदाम् ।।2।।

जिनका रूप श्वेत है, जो ब्रह्म विचार की परम तत्त्व हैं, जो सब संसार में फैल रही हैं, जा हाथों में वीणा और पुस्तक धारण किए रहती हैं, अभय देती हैं, मूर्खता रूपी अंधकार को दूर करती हैं, हाथ में स्फटिक मणि की माला लिए रहतो हैं, कमल के आसन पर विराजमान होती हैं और बुद्धि देने वाली हैं, उन आद्या परमेश्वरो भगवती सरस्वती को वंदना करता हूँ ।

वीणाधरे विपुलमङ्गलदानशीले
भक्तार्तिनाशिनि विरंचिहरीशवन्द्ये ।

कीर्तिप्रदेऽखिलमनोरथदे महार्हे
विद्याप्रदायिनि सरस्वति नौमि नित्यम् ॥3॥

हे वीणा धारण करने वाली, अपार मंगल देने वाली, भक्तों के दुःख छुड़ाने वाली, ब्रह्मा, विष्णु और शिव से वंदित होने वाली, कीर्ति तथा मनोरथ देने वाली, पूज्यवरा और विद्या देने वाली सरस्वती ! आपको नित्य प्रणाम करता हूं।

ब्रह्मा जगत् सृजति पालयतीन्दिरेशः
शम्भुर्विनाशयति देवि तव प्रभावैः ।
न स्यात्कृपा यदि तव प्रकटप्रभावे
न स्युः कथंचिदपि ते निजकार्यदक्षाः ॥4॥

हे देवी ! तुम्हारे ही प्रभाव से ब्रह्मा जगत को बनाते हैं, विष्णु पालते हैं और शिव विनाश करते हैं। हे प्रकट प्रभाव-शाली ! यदि इन तीनों पर तुम्हारी कृपा न हो तो वे किसी प्रकार अपना काम नहीं कर सकते।

श्वेताब्जपूर्णविमलासनसंस्थिते हे
श्वेताम्बरावृतमनोहरमंजुगात्रे ।
उद्यन्मनोज्ञसितपङ्कजमंजुलास्ये
विद्याप्रदायिनि सरस्वति नौमि नित्यम् ॥5॥

हे श्वेत कमलों से भरे हुए निर्मल आसन पर विराजने वाली, श्वेत वस्त्रों से ढके सुंदर शरीर वाली, खिले हुए सुंदर श्वेत कमल के समान मंजुल मुख वाली और विद्या देते वाली सरस्वती ! आपको नित्य प्रणाम करता हूं।

मोहान्धकारभरिते हृदये मदीये
मातः सदैव कुरु वासमुदारभावे ।
स्वीयाखिलावयवनिर्मलसुप्रभाभिः
शीघ्रं विनाशय मनोगतमन्धकारम् ॥6॥

हे उदार बुद्धि वाली मां ! मोह रूपी अंधकार से भरे मेरे

हृदय में सदा निवास करो और अपने सब अंगों की निर्मल कांति से मेरे मन के अंधकार का शीघ्र नाश करो।

मातस्त्वदीयपदपंकजभक्तियुक्ता
ये त्वाँ भजन्ति निखिलानपरान्विहाय।
ते निर्जरत्वमिह यान्ति कलेवरेण
भूवह्निवायुगगनाम्बुविनिर्मितेन ।।7।।

हे माता ! जो मनुष्य तुम्हारे चरण-कमलों में भक्ति रख-कर और सब देवताओं को छोड़कर भजन करते हैं, वे पृथ्वी, अग्नि, वायु, आकाश और जल—इन पांच तत्वों के बने शरीर से ही देवता बन जाते हैं।

सरस्वती महाभागे विद्ये कमललोचने।
विद्यारूपे विशालाक्षि विद्यां देहि नमोऽस्तुते ।।8।।

हे महाभाग्यवती ज्ञानस्वरूपा कमल के समान विशाल नेत्र वाली। ज्ञानदात्री सरस्वती ! मुझको विद्या दो, मैं तुमको प्रणाम करता हूं।

यदक्षरं पदं भ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवत्।
तत्सर्वं क्षम्यतां देवि प्रसीद परमेश्वरि ।।9।।

दे देवी ! जो अक्षर, पद अथवा मात्रा छूट गई हो, उसके लिए क्षमा करो, और हे परमेश्वरि ! प्रसन्न रहो।

□

सहायक-सामग्री

1. अथर्व वेद
2. उमदाते-उत-तवारीख, सोहलाल सूरी
3. कल्याण, तीर्थ अंक
4. कल्याण, तीर्थ अंक
5. कालिका पुराण
6. गुलाबनामा, कृपाराम
7. गोरखनाथ, डा० नगेन्द्रनाथ उपाध्याय
8. गोरखनाथ और उनका युग डा० रागेद्र राधव
9. तारीखे पंजाब, गुलाम महीयुद्दीन
10. तारीखे यामिनो, अल-उलूबी
11. देवी भागवत,
12. तीर्थ प्रकाश
13. दुर्गा सप्तशती
14. दुर्गा चालीसा
15. दुर्गाचर्न सृति
16. नाथ संप्रदाय
17. पद्मपुराण
18. ब्रह्मवैवर्त पुराण
19. बागे-बाहु—डा० बी० के० शास्त्री
20. भारत में शक्ति पूजा स्वामो सारदानन्द
21. भागवत पुराण
22. भारत के तीर्थ
23. भारतीय ईश्वरवाद, रामावतार शर्मा

24. महाभारत
25. मार्कण्डेय पुराण
26. माता वैष्णोदेवी और काला कानून
27. योगिसंदाया विष्कृति — चन्द्रनाथ योगी
28. राजतरंगिनी भाष्य, — डा० रघुनाथसिंह
29. राज दर्शिनी, — गनेशदास
30. रामचरितमानस, — तुलसीदास
31. लक्ष्मीतन्त्र
32, वराहपुराण
33. वामन पुराण
34. विष्णुपुराण
35. शक्ति, — मौथिली शरण गुप्त
36. शिवपुराण
37. स्कन्द पुराण
38. सीतोपनिषद
39. हिन्दी विश्वकोश, — नगेन्द्रनाथ वसु

अंग्रेजी

40. गोरखनाथ एण्ड दी कन योगीज, — ब्रिग्ज
41. ट्रैवल्ज इन कश्मीर एण्ड लद्दाख, — जी. टी. विने
42. पंजाब अण्डर दी मुगलज, — मुहम्मद अकबर
43. ट्रैवल्ज इन कश्मीर एण्ड पंजाब, — हूगल
44. ट्रैवल्ज इन हिन्दुस्तान, — मूरक्राफेट
45. लाईफ एण्ड टाईम आफ रणजीतसिंह, विक्रमाजीत हसरत
46. रणजीतसिंह, — के. के खुल्लर
47. महाराजा खड़गसिंह, — फौजासिंह
48. हिस्ट्री आफ हिल स्टेटस, — वोगल

अन्य

49. जनरल आफ जिओग्राफीकल, सोसाईटी आफ इण्डिया,
50. स्टडीज आफ दो राक युनिटस आफ, एरिया विटवोन जंगल गली एण्ड सलाल, डा० एस० के० चड्डा
51. राईज एण्ड फाल आफ, जम्मू किंगडम, डा० ए.स. एस. चाड़क
52. ए शार्ट हिस्ट्री आफ जम्मूराज, डा० एस. एस. चाड़क
53. दी धमर्थि ट्रस्ट आफ जम्मू व कश्मीर, ए व्रीफ इन्ट्रोडक्शन
54. माता वैंष्णोदेवो टेक ओवर, एण्ड देयर आफ्टर मे. ज. गोवर्धनसिंह जमवाल
55. असाधारण गजट जम्मू व कश्मोर सरकार 30 अगस्त-1986—
56. कौमबार, शजरा नसब संबत् 1964
57. सैटलमैन्ट रिकार्ड राजस्व विभाग, संबत् 1996

समाचार-पत्र

58. कश्मीर टाईम्ज
59. एकस्सैलसियर
60. हिन्दुस्तान टाईम्ज
61. हिन्द समाचार
62. दैनिक प्रताप
63. दैनिक वीर अर्जुन
64. प्रैस रिपोर्ट रिकार्ड, माता वैंष्णो देवी

अनुक्रमणी 1

अनुक्रमणी 2

□

